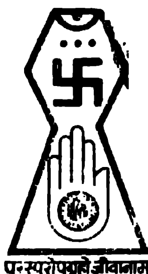
श्री जिनेन्द्र पूजन



ला० रघुवीरसिंह जैन धर्मार्थ ट्रस्ट
(जैना वाच कम्पनी)
७/३२ दरियागंज, नई दिल्ली-११०००२

भगवान बाहुबली की श्रवणबेलगोला में १८ मीटर (५७ फीट) ऊंची खड्गासन प्रतिमा के १००० वें प्रतिष्ठापना वर्ष के अवसर पर पाठकों को सादर भेंट

संकलन : सुभाष जैन

मूल्य : पूजन में नित्य प्रयोग

प्रथम संस्करण : १९८१

मुद्रक : भार्गवी प्रिंटर्स, दिल्ली-११००३२

Shri Jinendra Poojan Edition 1981

Price Daily Poojan

Publisher: Lala Raghubir Singh Jain Dharmarth Trust

(Jaina Watch Co..) 7/32 Darya Ganj. New Delhi-110002

दो शब्द

परम पुरुषार्थ—मोक्ष में कारणभूत एकमात्र वीतरागभाव है और उस वीतरागभाव की उपलब्धि वीतराग की उपासना से ही साध्य है। इसलिए श्रावक की भूमिका से लेकर मुनिदशा पर्यन्त वीतराग की पूजा का विधान किया गया है। ये पूजा द्रव्य-पूजा और भाव-पूजा के भेद से दो प्रकार की है। जहां मुनिदशा में मात्र भावपूजा का विधान है वहां श्रावक के लिए द्रव्य और भाव दोनों प्रकार की पूजा उपयोगी है। इस पूजा के माहात्म्य से मेंढक जैसा तुच्छ जीव भी अपना कल्याण कर गया। कहा भी है—'जगत में जिनपूजा सुखदाई।'

श्रावक का कर्तव्य है कि वह प्रातः दैनिक कृत्यों से निवृत्त होकर स्नान करके, शुद्ध वस्त्र पहिन, श्री जिनमंदिर में जाए और जल चंदनादि अष्ट द्रव्यों से जिनेंद्र भगवान की पूजा कर निज भावों को पवित्र बनाए। ऐसा करने से पाप की हानि तो होती ही है, साथ ही पुण्य का संचय भी होता है। पूजा का निरंतर अभ्यास होने से क्रमशः भावों की शुद्धि में सहायता मिलती है और परम्परया जीव निःश्रेयस सुख का अधिकारी बनता है।

जिनशासन में मूर्ति की पूजा का विधान नहीं है अपितु

मूर्ति के द्वारा मूर्तिमान की पूजा का विधान है। प्रकारांतर से यह जीव अर्हंत की पूजा के बहाने अपने गुणों का ही स्मरण करता है वह 'नमः समयसाराय' का ही अनुकरण करता है। आचार्यों ने श्रावक की निचली दशा से लेकर मुनि की उच्चदशा पर्यंत इस पूजा का विधान किया है। कहीं द्रव्यपूजा की प्रमुखता है तो कहीं भावपूजा की। अतः हमारा कर्तव्य है कि पूजा से लाभ उठाएं।

इस दिशा में श्रीमान स्व० ला० रघुवीरसिंह जैन के सुपुत्रों श्री प्रेमचंद जैन, श्री कैलाशचंद जैन व श्री शान्तिस्वरूप जैन 'जैना टाइम इण्डस्ट्रीज' दिल्ली ने एक और प्रयत्न किया है। वे स्वयं तो इस मार्ग में लगे ही हैं—जनसाधारण के लाभ का भी उन्हें सहज ध्यान है। वे सदा ही धार्मिक भावनाओं को मूर्तरूप देने में सावधान रहते हैं। फलतः यह पूजा-पुष्प भी उन्हीं के धार्मिक भावों का मूर्त-रूप है। आशा है यह पुष्प भव्य-जीवों के मार्ग में सहायक होगा और सभी जन इससे लाभ उठाएंगे।

पद्मचंद्र शास्त्री
एम० ए०
वीरसेवा मंदिर, दिल्ली

प्रकाशकीय-निवेदन

तुम निरखत मुझको मिली मेरी संपति आज।
कहं चक्री की संपदा कहां स्वर्ग साम्राज्य ॥
तुम वंदत जिनदेव जी नवनित मंगल होय।
विघन कोटि तत्क्षण टलें लहैं सुगति सबलोय ॥

सद-गृहस्थ का कर्तव्य है कि वह प्रातः शय्या त्यागकर णमोकार मंत्र का मंगलपाठ पढे और दैनिक कृत्य स्नानादि करके शुद्ध वस्त्र धारण कर श्री जिनमंदिर में जाकर जिनेंद्र-पूजन कर आत्मानुभूति का अभ्यास कर आनंदित हो।

जिस प्रकार भीषण गर्मी के आतप से त्रसित पथिक मार्ग की सघन-शीतल-हरित और जल-प्रपात युक्त पुष्पवाटिका की शीतल मंद वायु में आनंदित हो उठता है—उसकी थकान दूर हो जाती है, उसी प्रकार सांसारिक जन्ममरण और गार्हस्थिक झंझटों में फंसा प्राणी जिनेंद्र पूजा का लाभ प्राप्तकर —वीतराग मुद्रा के आधार पर अपूर्व आत्मिक शांति प्राप्त करना है—वह आत्मानुभूति के सुख में झूम उठता है।

श्रावक के दैनिक षट्कृत्यों में देवपूजा का प्रथम स्थान है और यह भारत के सभी प्रान्तों, नगरों और ग्रामों में अबाध-रूप में प्रचलित है। पूजा के पठन-पाठन की सुविधा को दृष्टि

में रखते हुए यह पूजा-पुष्प हमारे पूज्य पिताश्री ला०रघुबीर सिंह जैन के धर्मार्थ ट्रस्ट की ओर से प्रस्तुत है। आशा है यह भव्यजीवों के कल्याण मार्ग में निमित्त-भूत और हितकर होगी एवं भव्यबंधु इससे लाभ लेंगे।

पुस्तक में नवीन कुछ नहीं है—पूर्व कवियों की रचनाओं का संकलनमात्र है। इसके संकलन तथा प्रकाशन-व्यवस्था में जिन बंधुओं ने सहयोग दिया है हम उनके प्रति अत्यंत आभारी हैं।

७/३२ दरियागंज, नई दिल्ली — **प्रेमचंद जैन, कैलाशचंद जैन**

वी० नि० सं० २५०७ — **शांतिस्वरूप जैन**

अनुक्रमणिका



श्री तीर्थंकर महावीर स्वामी

मंगलाष्टकम् ।

श्रीमन्नम्रसुरा—सुरेन्द्र-मुकुट-प्रद्योतरत्न-प्रभा—
भास्वत्पादनखेन्दवः प्रवचनाम्भोधीन्दवः स्थायिनः ।
ये सर्वे जिनसिद्धसूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः ।
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥१॥
नाभेयादिजिनाः प्रशस्तवदनाः, ख्याताश्चतुर्विंशतिः ।
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो, ये चक्रिणो द्वादश ॥
ये विष्णुप्रतिविष्णु-लाङ्गल धरा, सप्तोत्तरा विंशतिः ।
त्रैलोक्ये प्रथितास्त्रिषष्ठिपुरुषाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥२॥
ये पञ्चौपधिऋद्धयः श्रुततपो-वृद्धिगता पञ्च ये ।
ये चाष्टाङ्गमहानिमित्तकुशलाश्चाष्टौ विधाश्चारिणः ॥
पञ्चज्ञानधराश्चयेऽपि विपुला, ये बुद्धि-ऋद्धीश्वराः ।
सप्तैते सकलार्चिता मुनिवराः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥३॥
ज्योतिर्व्यन्तर-भावनामर-गृहे, मेरौ कुलाद्रौ स्थिताः ।
जम्बूशाल्मलिचैत्यशाखिषु तथा, वक्षार-रूप्याद्रिषु ॥
इक्ष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे, द्वीपे च नन्दीश्वरे ।
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥४॥

कैलाशो वृषभस्य निर्वृत्ति-मही, वीरस्य पावापुरी ।
चम्पा या वासुपूज्यसज्जिनपते: सम्मेदशैलोऽर्हताम् ॥
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरी नेमीश्वरस्यार्हत: ।
निर्वाणा-वनव: प्रसिद्धविभवा:, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥५॥
सर्पो हारलता भवत्यसिलता, सत्पुष्पदामायते ।
सम्पद्येत रसायनं विषमपि, प्रीतिं विधत्ते रिपु: ॥
देवा यान्ति वशं प्रसन्नमनस:, किंवा बहु ब्रूमहे ।
धर्मादेव नभोऽपि वर्षति तरां, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥६॥
यो गर्भावतरोत्सवे भगवतां, जन्माभिषेकोत्सवे ।
यो जात: परिनिष्क्रमेण विभवो, य: केवलज्ञानभाक् ॥
य: कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा, सम्पादित: स्वर्गिभि: ।
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥७॥
आकाशं मूर्त्यभावा-दघकुलदहना-दग्निरुर्वी क्षमाप्ता ।
नै:संगादायुराप:-प्रगुणशमतया,स्वात्मनिष्ठै: सुयज्वा ॥
सोम: सौम्यत्वयोगा-द्रविरिति च विदु-स्तेजस: सन्निधानाद् ।
विश्वात्मा विश्वचक्षु-र्वितरतु भवतां, मंगलं श्रीजिनेश: ॥८॥
इत्थं श्री जिनमंगलाष्टकमिदं, सौभाग्य-सम्पत्करं ।
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थङ्कराणां सुखा: ॥
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनै:, धर्मार्थकामान्विता: ।
लक्ष्मीर्लभ्यत एव मानवहिता, निर्वाणलक्ष्मीरपि ॥९॥

॥ इति मंगलाष्टकम् ॥

महावीराष्टकस्तोत्रम्

[कविवर भागचन्द]

शिखरणी

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचित:
समं भान्ति ध्रौव्य-व्यय-जनि-लसन्तोऽन्तरहिता: ।
जगत्साक्षी मार्ग-प्रकटन-परो भानुरिव यो
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥१॥
अताम्रं यच्चक्षु: कमल-युगलं स्पन्द-रहितं
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि ।
स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥२॥
नमन्नाकेन्द्राली-मुकुट-मणि-भा-जाल-जटिलं
लसत्पादाम्भोज-द्वयमिह यदीयं तनुभृताम् ।
भवज्ज्वाला-शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतिमपि
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥३॥
यदर्चाभावेन प्रमुदित-मना दर्दुर इह
क्षणादासीत्स्वर्गी गुण-गण-समृद्ध: सुख-निधि: ।

लभन्ते सदभक्ताः शिव-सुख-समाजं किमु तदा
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥४॥

कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगत - तनुर्ज्ञान - निवहो
विचित्रात्माप्येको नृपति-वर-सिद्धार्थ-तनयः ।
अजन्मापि श्रीमान् विगत-भव-रागोद्भुत-गतिः
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥५॥

यदीया वाग्गङ्गा विविध-नय-कल्लोल-विमला
बृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति ।
इदानीमप्येषा बुध-जन-मरालैः परिचिता
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥६॥

अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवन - जयी काम - सुभटः
कुमारावस्थायामपि निज-बलाद्येन विजितः
स्फुरन्नित्यानन्द-प्रशम-पद-राज्याय स जिनः
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥७॥

महामोहातङ्क - प्रशमन - पराकस्मिक - भिषक्
निरापेक्षो बन्धुर्विदित-महिमा मङ्गलकरः ।
शरण्यः साधूनां भव-भयभृतामुत्तमगुणो
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥८॥

महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या 'भागेन्दु' ना कृतम् ।
यः पठेच्छृणुयाच्चापि स याति परमां गतिम् ॥९॥

भक्तामरस्तोत्रम्

[श्रीमानतुंगाचार्य]

भक्तामर-प्रणत-मौलि-मणि-प्रभाणा-
मुद्योतकं दलित-पाप-तमो - वितानम् ।
सम्यक्प्रणम्य जिन-पाद-युगं युगादा-
वालम्बनं भव-जले पततां जनानाम् ॥१॥
यः संस्तुतः सकल-वाङ्मय-तत्त्व-बोधा-
दुद्भूत-बुद्धि-पटुभिः सुर-लोक-नाथैः ।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितय - चित्त - हरैरुदारैः
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥२॥
बुद्धया विनापि विबुधार्चित-पाद-पीठ
स्तोतुं समुद्यत-मतिर्विगत-त्रपोऽहम् ।
बालं विहाय जल-संस्थितमिन्दु-बिम्ब-
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ॥३॥
वक्तुं गुणान्गुण-समुद्र शशाङ्क-कान्तान्
कस्ते क्षमः सुर-गुरु-प्रतिमोऽपि बुद्धया ।
कल्पान्त-काल - पवनोद्धत - नक्र - चक्रं
को वा तरीतुमलमम्बु निधिं भुजाभ्याम् ॥४॥
सोऽहं तथापि तव भक्ति-वशान्मुनीश
कर्तुं स्तवं विगत-शक्तिरपि प्रवृत्तः ।

प्रीत्यात्म-वीर्यमविचार्य मृगो मृगेन्द्रं
नाभ्येति किं निज-शिशोः परिपालनार्थम् ।।५।।

अल्प-श्रुतं श्रुतवतां परिहास-धाम
त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम् ।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति
तच्चारुचाम्र कलिका-निकरैक-हेतु ।।६।।

त्वत्संस्तवेन भव-सन्तति-सन्निबद्ध
पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम् ।
आक्रान्त - लोकमलि - नीलमशेषमाशु
सूर्यांशु-भिन्नमिव शार्वरमन्धकारम् ।।७।।

मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेद-
मारभ्यते तनु-धियापि तव प्रभावात् ।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनी-दलेषु
मुक्ता-फलद्युतिमुपैति ननूद-बिन्दुः ।।८।।

आस्तां तव स्तवनमस्त-समस्त दोषं
त्वत्सङ्कथापि जगतां दुरितानि हन्ति ।
दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव
पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ।।९।।

नात्यद्भुतं भुवन-भूषण भूत-नाथ
भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः ।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा

भृत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥१०॥
दृष्ट्वाभवन्तमनिमेष - विलोकनीयं
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः ।
पीत्वा पयः शशिकर-द्युति-दुग्ध-सिन्धोः
क्षारं जलं जल-निधेरसितु क इच्छेत् ॥११॥
यैः शान्त-राग-रुचिभिः परमाणुभिस्त्वं
निर्मापितस्त्रिभुवनैक - ललाम - भूत ।
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां
यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति ॥१२॥
वक्त्रं क्व ते सुर-नरोरग-नेत्र-हारि
निःशेप-निर्जित-जगत्त्रितयोपमानम् ।
बिम्बं कलङ्क-मलिनं क्व निशाकरस्य
यद्वासरे भवति पाण्डु पलाश-कल्पम् ॥१३॥
संपूर्ण-मंडल-शशाङ्क - कला - कलाप-
शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लङ्घयन्ति ।
ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर-नाथमेकं
कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टम् ॥१४॥
चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्गनाभि-
र्नीतं मनागपि मनो न विकार-मार्गम् ।
कल्पान्त-काल-मरुता चलिताचलेन
किं मन्दराद्रि-शिखरं चलितं कदाचित् ॥१५॥

निर्धूम-वर्तिरपवर्जित-तैल-पूर
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि ।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः ॥१६॥
नास्तं कदाचिदुपयासि न राहु-गम्यः
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति ।
नाम्भोधरोदर-निरुद्ध-महा-प्रभावः
सूर्यातिशायि-महिमासि मुनीन्द्र लोके ॥१७॥
नित्योदयं दलित-मोह-महान्धकारं
गम्यं न राहु-वदनस्य न वारिदानाम् ।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्ति-
विद्योतयज्जगदपूर्व-शशांक-बिम्बम् ॥१८॥
किं शर्वरीषु शशिनाह्नि बिवस्वता वा
युष्मन्मुखेन्दु-दलितेषु तमः सु नाथ ।
निष्पन्न-शालि-वन-शालिनि जीव-लोके
कार्यं कियज्जलधरैर्जल-भार-नम्रैः ॥१९॥
ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं
नैवं तथा हरि-हरादिषु नायकेषु ।
तेजःस्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं
नैवं तु काच-शकले किरणाकुलेऽपि ॥२०॥
मन्ये वरं हरि-हरादय एव दृष्टा

दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति ।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्य:
कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ॥२१॥
स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्र-रश्मि
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥२२॥
त्वामामनन्ति मुनय: परम पुमांस-
मादित्य-वर्णममलं तमस: परस्तात् ।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं
नान्य: शिव: शिव-पदस्य मुनीन्द्र पन्था: ॥२३॥
त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसङ्ख्यमाद्यं
ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम् ।
योगीश्वरं विदित-योगमनेकमेकं
ज्ञान-स्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्त: ॥२४॥
बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित-बुद्धि-बोधात्
त्वं शंकरोऽसि भुवन-त्रय-शंकरत्वात् ।
धातासि धीर शिव-मार्ग-विधेर्विधानाद्
व्यक्तं त्वमेव भगवन्पुरुषोत्तमोऽसि ॥२५॥
तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ
तुभ्यं नम: क्षिति-तलामल-भूषणाय ।

तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय
तुभ्यं नमो जिन भवोदधि-शोषणाय ॥२६॥
को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषै-
स्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश ।
दोषैरुपात्तविविधाश्रय-जात-गर्वैः
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥२७॥
उच्चैरशोक-तरु-संश्रितमुन्मयूख-
माभाति रूपममल भवतो नितान्तम् ।
स्पष्टोल्लसत्किरणमस्त-तमो-वितानं
बिम्बं रवेरिव पयोधर-पार्श्ववर्ति ॥२८॥
सिंहासने मणि-मयूख-शिखा-विचित्रे
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम् ।
बिम्बं वियद्विलसदंशुलता-वितानं
तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्र-रश्मेः ॥२९॥
कुन्दावदात-चल-चामर-चारु-शोभं
विभ्राजते तव वपुः कलधौत-कान्तम् ।
उद्यच्छशाङ्क-शुचि-निर्झर-वारि-धार-
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥३०॥
छत्र-त्रयं तव विभाति शशाङ्क-कान्त-
मुच्चैः स्थितं स्थगित-भानु-कर-प्रतापम् ।
मुक्ता-फल-प्रकर-जाल-विवृद्ध-शोभं

प्रख्यापयत्त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ॥३१॥
गम्भीर-तार-रव-पूरित-दिग्विभाग-
स्त्रैलोक्य-लोक-शुभ-सङ्गम-भूति-दक्षः ।
सद्धर्मराज-जय-घोषण-घोषकः सन्
खे दुन्दुभिर्नदति ते यशसः प्रवादी ॥३२॥
मन्दार-सुन्दर-नमेरु-सुपारिजात-
सन्तानकादि-कुसुमोत्कर-वृष्टि-रुद्धा ।
गन्धोद-विन्दु-शुभ-मन्द-मरुत्प्रयाता
दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा ॥३३॥
शुम्भत्प्रभा-वलय-भूरि-विभा विभोस्ते
लोक-त्रये द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ती ।
प्रोद्यद्दिवाकर-निरन्तर-भूरि-संख्या
दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोम-सौम्याम् ॥३४॥
स्वर्गापवर्ग-गम-मार्ग-विमार्गणेष्टः
सद्धर्म-तत्त्व-कथनैक-पटुस्त्रिलोक्याः ।
दिव्य-ध्वनिर्भवति ते विशदार्थ-सर्व-
भाषा-स्वभाव-परिणाम-गुणैःप्रयोज्यः ॥३५॥
उन्निद्र-हेम-नव-पङ्कज-पुञ्ज-कान्ती
पर्युल्लसन्नख-मयूख-शिखाभिरामौ ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥३६॥

इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र
धर्मोपदेशन-विधौ न तथा परस्य ।
यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा
तादृक्कुतो ग्रह-गणस्य विकासिनोऽपि ॥३७॥

श्च्योतन्मदाविल-विलोल-कपोल-मूल-
मत्त-भ्रमद्भ्रमर-नाद-विवृद्ध-कोपम् ।
ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तं
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ॥३८॥

भिन्नेभ-कुम्भ-गलदुज्ज्वल-शोणिताक्त-
मुक्ता-फल-प्रकर-भूषित-भूमि-भागः ।
बद्ध-क्रमः क्रम-गतं हरिणाधिपोऽपि
नाक्रामति क्रम-युगाचल-संश्रितं ते ॥३९॥

कल्पान्त-काल-पवनोद्धत-वह्नि-कल्पं
दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम् ।
विश्वं जिघत्सुमिव संमुखमापतन्तं
त्वन्नाम-कीर्तन-जलं शमयत्यशेषम् ॥४०॥

रक्तेक्षणं समद-कोकिल-कण्ठ-नीलं
क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तम् ।
आक्रामति क्रम-युगेन निरस्त-शङ्क-
स्त्वन्नाम-नाग-दमनी हृदि यस्य पुंसः ॥४१॥

वल्गत्तुरङ्ग-गज-गर्जित-भीमनाद-

माजौ बलं बलवतामपि भूपतीनाम् ।
उद्यद्दिवाकर-मयूख-शिखापविद्धं
त्वत्कीर्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति ॥४२॥
कुन्ताग्र-भिन्न-गज-शोणित-वारिवाह-
वेगावतार-तरणातुर-योध-भीमे
युद्धे जयं विजित-दुर्जय-जेय-पक्षा-
स्त्वत्पाद-पंकज-वनाश्रयिणो लभन्ते ॥४३॥
अम्भोनिधौ क्षुभित-भीषण-नक्र-चक्र-
पाठीन-पीठ-भय-दोल्वण-वाडवाग्नौ ।
रङ्गत्तरङ्ग-शिखर-स्थित-यान-पात्रा-
स्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति ॥४४॥
उद्भूत-भीषण-जलोदर-भार-भुग्नाः
शोच्यां दशामुपगताश्च्युत-जीविताशाः ।
त्वत्पाद-पंकज-रजोमृत-दिग्ध-देहा
मर्त्या भवन्ति मकरध्वज-तुल्यरूपाः ॥४५॥
आपाद-कण्ठमुरु-शृङ्खल-वेष्टिताङ्गा
गाढं बृहन्निगड-कोटि-निघृष्ट-जङ्घाः ।
त्वन्नाम-मन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः
सद्यः स्वयं विगत-बन्ध-भया भवन्ति ॥४६॥
मत्तद्विपेन्द्र-मृगराज-दवानलाहि-
सङ्ग्राम-वारिधि-महोदर-बन्धनोत्थम् ।

तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव
यस्तावकं स्तवमिम मतिमानधीते ॥४७॥
स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र गुर्णैनिबद्धां
भक्त्या मया रुचिर-वर्ण-विचित्र-पुष्पाम् ।
धत्ते जनो य इह कण्ठ-गतामजस्रं
तं 'मानतुङ्ग' मवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥४८॥

श्री पार्श्वनाथ स्तोत्र

भुजंगप्रयात छन्द

नरेंद्रं फणीन्द्रं सुरेंद्रं अधीशं,
शतेंद्रं सु पूजें भजें नाय शीशं ।
मुनींद्रं गणेंद्रं नमों जोड़ि हाथं,
नमों देवदेवं सदा पार्श्वनाथं ॥१॥
गजेंद्रं मृगेंद्रं गह्यो तू छुड़ावै,
महा आगतैं नागतैं तू बचावै ।
महावीर तैं युद्ध में तू जितावै,
महा रोग तैं बंध तैं तू छुड़ावै ॥२॥
दुखीदुःखहर्ता सुखीसुक्खकर्ता,
सदा सेवकों को महानंदभर्ता ।

हरै यक्ष राक्षस्स भूतं पिशाचं,
विषं डाकिनी विघ्न के भय अवाचं ॥३॥
दरिद्रीनको द्रव्य के दान दीने,
अपुत्रीनकों तैं भले पुत्र कीने।
महासंकटों से निकारे विधाता,
सबै संपदा सर्व को देहि दाता ॥४॥
महाचोर को वज्र को भय निवारै,
महापौन के पुंजतैं तू उबारै ।
महाक्रोध की अग्नि को मेघ-धारा,
महालोभ-शैलेश को वज्र भारा ॥५॥
महामोह अंधेर को ज्ञान भानं,
महाकर्मकांतार को दौ प्रधानं ।
किये नाग नागिन अधोलोक स्वामी,
हरचो मान तू दैत्य को ही अकामी ॥६॥
तुही कल्पवृक्षं तुहो कामधेनुं,
तुही दिव्य चिंतामणी नाग एनं ।
पशू नर्क के दुःखतैं तू छुड़ावै,
महास्वर्ग तैं मुक्ति में तू बसावैं ॥७॥
करै लोह को हेम पाषाण नामी,
रटै नाम सो क्यों न हो मोक्षगामी ।
करै सेवता की करैं देवसेवा,

सुनै वैन सोही लहै ज्ञान मेवा ॥८॥
जपै जाप ताके नहीं पाप लागें,
धरै ध्यान ताके सबै दोष भागें ।
बिना तोहि जाने धरे भव घनेरे,
तुम्हारी कृपा तैं सरैं काज मेरे ॥९॥

दोहा

गणधर इंद्र न कर सकें, तुम विनती भगवान ।
'द्यानत' प्रीति निहारकैं, कीजे आप समान ॥१०॥

विषापहार स्तोत्र

आतम लीन अनन्त गुण,
स्वामी ऋषभ जिनेन्द्र ।
नित प्रति वन्दित चरण युग,
सुर नागेन्द्र नरेन्द्र ॥१॥
विश्व सुनाथ विमल गुण ईश,
विहरमान बन्दों जिन बीस ।
गणधर गौतम शारदमाय,
वर दीजै मोहि बुद्धि सहाय ॥२॥
सिद्ध साधु सत गुरु आधार,
करूँ कवित्त आतम उपकार ।

विषापहार स्तवन उद्धार,
सुक्ख औषधी अमृत सार ॥३॥
मेरा मंत्र तुम्हारा नाम,
तुम ही गारुड गरुड समान ।
तुम सम वैद्य नहीं संसार,
तुम स्याने तिहुँ लोक मँझार ॥४॥
तुम विषहरण करन जग सन्त,
नमों नमों तुम देव अनन्त ।
तुम गुण महिमा अगम अपार,
सुरगुरु शेष लहैं नहिं पार ॥५॥
तुम परमातम परमानन्द,
कल्पवृक्ष यह सुख के कन्द ।
मुदित मेरु नय-मण्डित धीर,
विद्यासागर गुण गम्भीर ॥६॥
तुम दधिमथन महा वरवीर,
संकट विकट भयभंजन भीर ।
तुम जगतारण तुम जगदीश,
पतित उधारण विसवाबीस ॥७॥
तुम गुणमणि चिन्तामणि रास,
चित्रबेलि चितहरण चितास ।
विघ्नहरण तुम नाम अनूप,

मंत्र यंत्र तुमही मणिरूप ॥८॥
जैसे वज्र पर्वत परिहार,
त्यों तुम नाम जु विष-अपहार।
नागदमन तुम नाम सहाय,
विषहर विषनाशक क्षणमाय ॥९॥
तुम सुमरण चिंते मनमाहिं,
विष पीवे अमृत हो जाहिं।
नाम सुधारस वर्षे जहाँ,
पाप पंकमल रहै न तहाँ ॥१०॥
ज्यों पारस के परसे लोह,
निज गुण तज कंचनसम होह।
त्यों तुम सुमरण साधे सूंच,
नीच जो पावे पदवी ऊँच ॥११॥
तुमहिं नाम औषधि अनुकूल,
महामंत्र सर जीवन मूल।
मूरख मर्म न जाने भेव,
कर्म कलंक दहन तुम देव ॥१२॥
तुम ही नाम गारुड़ गह गहे,
काल भुजंगम कैसे रहे।
तुम्हीं धनन्तर हो जिनराय,
मरण न पावे को तूम ठाय ॥१३॥

तुम सूरज उदकाघट जास,
संशय शीत न व्यापे तास।
जीवे दादुर वर्षे तोय,
सुन वाणी सरजीवन होय ॥१४॥
तुम बिन कौन करै मुझ पार,
तुम कर्त्ता-हर्त्ता किरपाल ।१५॥
शरण आयो तुम्हरी जिनराज,
अब मो काज सुधारो आज।
मेरे यह धन पूंजी पूत,
साह कहै घर राखो सूत ॥१६॥
करौं वीनती बारम्बार,
तुम बिन कर्म करै को क्षार ॥१७॥
विग्रह ग्रह दुख विपति वियोग,
और जु घोर जलंधर रोग।
चरण कमल रज टुक तन लाय,
कुष्ट व्याधि दीरघ मिट जाय ॥१८॥
मैं अनाथ तुम त्रिभुवननाथ,
मात-पिता तुम सज्जन साथ।
तुम-सा दाता कोई न आन,
और कहाँ जाऊँ भगवान ॥१९॥
प्रभुजी पतित उधारन आह,

बांह गहेकी लाज निबाह ।
जहँ देखो तहं तुमही आय,
घट-घट ज्योति रही ठहराय ॥२०॥
बाट सुघाट विषम भय जहाँ,
तुम बिन कौन सहाई तहाँ ।
विकट व्याधि व्यंतर जल दाह,
नाम लेत क्षण माहिं विलाह ॥२१॥
आचार्य मानतुंग अवसान,
संकट सुमिरो नाम निधान ।
भक्ता-मरकी भक्ति सहाय,
प्रण राखें प्रगटे तिस ठाय ॥२२॥
चुगल एक नृप विग्रह ठयो,
वादिराज नृप देखन गयो ।
एकी भाव कियो निसन्देह,
कुष्ट गयो कंचनसम देह ॥२३॥
कल्याण मदिर कुमुद चंद्र ठयो,
राजा विक्रम विस्मय भयो ।
सेवक जान तुम करी सहाय,
पारसनाथ प्रगटै तिस ठाय ॥२४॥
गई व्याधि विमल मति लही,
तहाँ फुनि सनिधि तुमही कही ।

भव सुदत्त श्रीपाल नरेश,
सागर जल संकट सुविशेप ॥२५॥
तहाँ पुनि तुमही भये सहाय,
आनन्द से घर पहुँचे जाय।
सभा दुश्शासन पकड़ो चीर,
द्रुपदी प्रण राखो कर धीर ॥२६॥
सीता लक्ष्मण दीनों साज,
रावण जीत विभीपण राज।
सेठ सुदर्शन साहस दियो,
शूली से सिंहासन कियो ॥२७॥
बारिपेन नृप धरियो ध्यान,
ततक्षण उपजो केवल ज्ञान।
सिंह सर्पादिक जीव अनेक,
जिन सुमिरे तिन राखो टेक ॥२८॥
ऐसी कीरति जिनकी कहूं,
साह कहै शरणगत रहूं।
इस अवसर जीवे यह बाल,
मुझ सन्देह मिटै तत्काल ॥२९॥
वन्दी छोड़ विरद महाराज,
अपना विरद निवाहो आज।
और आलंबन मेरे नाहिं,

मैं निश्चय कीनो मन माहिं ॥३०॥
चरण कमल छोड़ों ना सेव,
मेरे तो तुम सतगुरु देव।
तुम ही सूरज तुम ही चन्द,
मिथ्या मोह निकन्दनकन्द ॥३१॥
धर्मचक्र तुम धारण धीर,
विषहर चक्रबिड़ारन वीर।
चोर अग्नि जल भूत पिशाच,
जल जङ्घम अटवी उदबास ॥३२॥
दर दुशमन राजा वश होय,
तुम प्रसाद गर्जे नाहिं कोय।
हय गज युद्ध सबल सामंत,
सिंह शार्दूल महा भयवंत ॥३३॥
दृढ़ बंधन विग्रह विकराल,
तुम सुमरत छूटें तत्काल।
पांयन पनहीं नमक न नाज,
ताको तुम दाता गजराज ॥३४॥
एक उपाय थप्यो पुन राज,
तुम प्रभु बड़े गरीब निवाज।
पानी से पैदा सब करो,
भरी डाल तुम रीती करो ॥३५॥

हर्त्ता कर्त्ता तुम किरपाल,
कीड़ी कुञ्जर करत निहाल ।
तुम अनन्त ज्ञान अल्प मो ज्ञान,
कहं लग प्रभुजी करों बखान ॥३६॥
आगम पन्थ न सूझे मोहि,
तुम्हरे चरन बिना किमि होहि ।
भये प्रसन्न तुम साहस कियो,
दयावन्त तब दर्शन दियो ॥३७॥
साह पुत्र जब चेतन भयो,
हँसत हँसत वह घर तब गयो ।
धन दर्शन पायो भगवन्त,
आज अंग मुख नयन लसन्त ॥३८॥
प्रभु के चरण कमल में नयो,
जन्म कृतारथ मेरो भयो ।
कर युग जोड़ नवाऊँ शीश,
मुझ अपराध क्षमो जगदीश ॥३९॥
सत्रह सौ पंद्रह शुभ यान,
नारनौल तिथि चौदस जान ।
पढ़े सुने तहाँ परमानन्द,
कल्पवृक्ष महा सुखकन्द ॥४०॥
अष्ट सिद्धि नवनिधि सो लहै,

अचलकीर्ति आचारज कहै ।
याको पढ़ो सुनो सब कोय,
मनवाँछित फल निश्चय होय ॥४१॥

दोहा

भय भञ्जन रञ्जन जगत, बिषापहार अभिराम ।
संशय तज सुमिरो सदा, श्री जिनवर को नाम ॥४२॥

श्री गोम्मटेश संस्तवन

शत-शत बार विनम्र प्रणाम !

विकसित नील कमल दल सम हैं जिनके सुन्दर नेत्र विशाल ।
शरदचन्द्र शरमाता जिनकी निरख शांत छवि, उन्नत भाल ।
चम्पक पुष्प लजाता लख कर ललित नासिका सुषमा धाम ।
विश्ववंद्य उन गोम्मटेश प्रति शत-शत बार विनम्र प्रणाम ॥१॥
पय सम विमल कपाल, झूलते कर्ण कंध पर्यंत नितान्त ।
सौम्य, सातिशय, सहज शांतिप्रद वीतराग मुद्राति प्रशांत ।
हस्तिशुंड सम सबल भुजाएं बन कृतकृत्य करें विश्राम ।
विश्वप्रेम उन गोम्मटेश प्रति शत-शत बार विनम्र प्रणाम ॥२॥
दिव्य संख सौंदर्य विजयिनी ग्रीवा जिनकी भव्य विशाल ।
दृढ़ स्कंध लख हुआ पराजित हिमगिरि का भी उन्नत भाल ।
जग जन मन आकर्षित करती कटि सुपुष्ट जिनकी अभिराम ।
विश्ववंद्य उन गोम्मटेश प्रति शत-शत बार विनम्र प्रणाम ॥३॥

विंध्याचल के उच्च शिखर पर हीरक ज्यों दमके जिन भाव।
तप: पूत सर्वांग सुखद हैं आत्मलीन जो देव विशाल।
वर विराग प्रसाद शिखामणि, भुवन शांतिप्रद चन्द्र ललाम।
विश्ववंद्य उन गोम्मटेश प्रति शत-शत बार विनम्र प्रणाम।।४।।
निर्भय वन बल्लरियां लिपटीं पाकर जिनकी शरण उदार।
भव्य जनों को सहज सुखद हैं कल्पवृक्ष सम सुख दातार।
देवेन्द्रों द्वारा अर्चित हैं जिन पादारविंद अभिराम।
विश्ववंद्य उन गोम्मटेश प्रति शत-शत बार विनम्र प्रणाम।।५।।
निष्कलंक निर्ग्रंथ दिगम्बर भय भ्रमादि परिमुक्त नितांत।
अम्बरादि-आसक्ति विवर्जित निर्विकार योगीन्द्र प्रशांत।
सिंह-स्याल-शुंडाल-व्यालकृत उपसर्गों में अटल अकाम।
विश्ववंद्य उन गोम्मटेश प्रति शत-शत बार विनम्र प्रणाम।।६।।
जिनकी सम्यग्दृष्टि विमल है आशा-अभिलाषा परिहीन।
संसृति-सुख वांछा से विरहित, दोष मूल अरि मोह विहीन।
तन संपुष्ट विरागभाव से लिया भरत प्रति पूर्ण विराम।
विश्ववंद्य उन गोम्मटेश प्रति शत-शत बार विनम्र प्रणाम।।७।।
अंतरंग-बहिरंग-संग धन धाम विवर्जित विभु संभ्रांत।
समभावी, मदमोह-रागजित् कामक्रोध उन्मुक्त नितांत।
किया वर्ष उपवास मौन रह बाहुबली चरितार्थ सुनाम।
विश्ववंद्य उन गोम्मटेश प्रति शत-शत बार विनम्र प्रणाम।।८।।

श्री दौलतरामजी कृत स्तुति

दोहा

सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्द रस लीन ।
सो जिनेन्द्र जयवन्त नित, अरि-रज-रहस विहीन ॥१॥

पद्धरि छंद

जय वीतराग विज्ञानपूर,
जय मोहतिमिरको हरन सूर ।
जय ज्ञानअनंतानंत धार,
दृगसुख-वीरजमंडित अपार ॥२॥
जय परमशांत मुद्रा समेत,
भविजनको निज अनुभूति हेत ।
भवि भागनवशजोगेवशाय,
तुम धुनि ह्वै सुनि विभ्रम नसाय ॥३॥
तुम गुण चिंतत निजपरविवेक,
प्रगटै विघटैं आपद अनेक ।
तुम जगभूषण दूषणविमुक्त,
सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त ॥४॥
अविरुद्ध शुद्ध चेतनस्वरूप,
परमात्म परम पावन अनूप ।
शुभ-अशुभविभाव अभाव कीन,

स्वाभाविकपरिणति मयअछीन ॥५॥
अप्टादश-दोषविमुक्त धीर,
स्व-चतुष्टयमय राजत गंभीर ।
मुनिगणधरादि सेवत महंत,
नवकेवललब्धिरमा धरंत ॥६॥
तुम शासन सेय अमेय जीव,
शिव गये जाहिं जैहैं सदीव।
भवसागर में दुख छार वारि,
तारन को अवर न आप टारि ॥७॥
यह लखि निज दुखगद हरण काज,
तुम ही निमित्तकारण इलाज ।
जाने तातैं मैं शरण आय,
उचरों निज दुख जो चिर लहाय ॥८॥
मैं भ्रम्यो अपनपो विसरि आप,
अपनाये विधि फल पुण्य पाप ।
निजको परको करता पिछान,
पर में अनिष्टता इष्ट ठान ॥९॥
आकुलित भयो अज्ञान धारि,
ज्यों मृग मृगतृष्णा जानि वारि ।
तनपरणति में आपो चितार,
कबहूं न अनुभयो स्वपदसार ॥१०॥

तुम को विन जाने जो कलेश,
पाये सो तुम जानत जिनेश।
पशु-नारक-नर-सुरगति मझार,
भव धर-धर मर्यो अनंत बार ॥११॥
अब काललब्धिबलतैं दयाल,
तुम दर्शन पाय भयो खुश्याल।
मन शांत भयो मिटि सकल द्वंद्व,
चाख्यो स्वातम-रस दुखनिकन्द ॥१२॥
तातैं अब ऐसी करहु नाथ,
बिछुरै न कभी तुव चरण साथ।
तुम गुणगण को नहिं छेव देव,
जग तारन को तुव विरद एव ॥१३॥
आतम के अहित विषय कषाय,
इन में मेरी परिणति न जाय।
मैं रहूं आप में आप लीन,
सो करो होउं ज्यों निजाधीन ॥१४॥
मेरे न चाह कछु और ईश,
रत्नत्रयनिधि दीजे मुनीश।
मुझ कारज के कारन सु आप,
शिव करहु, हरहु मम मोहताप ॥१५॥
शशि शांतिकरन तप हरन हेत,

स्वयमेव तथा तुम कुशल देत।
पीवत पियूष ज्यों रोग जाय,
त्यों तुम अनुभवतैं भव नसाय ॥१६॥
त्रिभुवनतिहुंकाल मँझार कोय,
नहिं तुम बिन निज सुखदाय होय।
मो उर यह निश्चय भयो आज,
दुखजलधिउतारन तुम जिहाज ॥१७॥

दोहा

तुम गुण-गण-मणि गणपति,
गणत न पावहिं पार।
'दौल' स्वल्पमति किम कहै,
नमूँ त्रियोगसँभार ॥१८॥

दर्शन-पाठ

प्रभु पतितपावन मैं अपावन,
चरन आयो सरन जी।
यो विरद आप निहार स्वामी,
मेट जामन मरनजी।
तुम ना पिछान्या आन मान्या,
देव विविधप्रकार जी।

या बुद्धिसेती निज न जान्यो,
भ्रम गिन्यो हितकारजी ॥१॥
भवविकटवन में करम वैरी,
ज्ञानधन मेरो हर्यो ।
तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय,
अनिष्टगति धरतो फिर्यो ।
धन घड़ी यो धन दिवस यो ही,
धन जनम मेरो भयो ।
अब भाग मेरो उदय आयो,
दरश प्रभुको लखलयो ॥२॥
छवि वीतरागी नगन मुद्रा,
दृष्टि नासापै धरैं ।
वसु प्रातिहार्य अनंत गुण जुत,
कोटि रवि छविको हरैं ।
मिट गयो तिमिर मिथ्यात मेरो,
उदयरवि आतम भयो ।
मो उर हरप ऐसो भयो,
मनु रंक चिंतामणि लयो ॥३॥
मैं हाथ जोड़ नवाय मस्तक,
वीनऊं तुव चरन जी ।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन.

सुनहु तारन तरन जी ।
जाचूं नहीं सुर वास पुनि,
नरराज परिजन साथजी ।
बुध जाचहूं तुव भक्ति भव भव,
दीजिये शिवनाथ जी ॥४॥

दर्शन-पाठ

दर्शनं देवदेवस्य, दर्शनं पाप-नाशनं ।
दर्शनं स्वर्ग-सोपानं, दर्शनं मोक्ष-साधनं ॥१॥
दर्शनेन जिनेन्द्राणां, साधूनां वंदनेन च ।
न चिरं तिष्ठते पापं, छिद्रहस्ते यथोदकम् ॥२॥
वीतरागमुखं दृष्ट्वा, पद्मरागसमप्रभं ।
अनेकजन्मकृतं पापं, दर्शनेन विनश्यति ॥३॥
दर्शनं जिनसूर्यस्य, संसार-ध्वान्त-नाशनं ।
बोधनं चित्तपद्मस्य, समस्तार्थप्रकाशनं ॥४॥
दर्शनं जिनचन्द्रस्य, सद्धर्मामृतवर्षणं ।
जन्मदाहविनाशाय, वर्धनं सुखवारिधेः ॥५॥
जीवादितत्त्वप्रतिपादकाय,
सम्यक्त्वमुख्याष्टगुणार्णवाय ।

प्रशांतरूपाय दिगम्बराय,
देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥६॥
चिदानन्दैकरूपाय, जिनाय परमात्मने ।
परमात्मप्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥७॥
अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात्कारुण्यभावेन, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ! ॥८॥
न हि त्राता न हि त्राता, न हि त्राता जगत्त्रये ।
वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भविष्यति ॥९॥
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने ।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भवे भवे ॥१०॥
जिनधर्मविनिर्मुक्तो, मा भवेच्चक्रवर्त्यपि ।
स्याच्चेटो दरिद्रोऽपि जिनधर्मानुवासितः ॥११॥
जन्म जन्म कृतं पापं, जन्मकोटिमुपार्जितं ।
जन्ममृत्युजरारोगं, हन्यते जिनदर्शनात् ॥१२॥
अद्याभवत्सफलता नयनद्वयस्य,
देव ! त्वदीय चरणांबुजवीक्षणेन ।
अद्य त्रिलोकतिलक ! प्रतिभासते मे,
संसारवारिधिरयं चुलुकप्रमाणम् ॥१३॥

अभिषेक पाठ

दोहा

जय जय भगवन्ते सदा, मंगल मूल महान।
वीतराग सर्वज्ञ प्रभु, नमों जोरि जुगपान ॥

छन्द (अडिल्ल और गीत)

श्रीजिन जग में ऐसो, को बुधवन्त जू,
जो तुम गुण वरननि करि पावै अन्त जू।
इन्द्रादिक सुर चार ज्ञानधारी मुनी,
कहि न सकै तुम गुणगण हे त्रिभुवनधनी ॥

अनुपम अमित तुम गुणनि वारिधि, ज्यों अलोकाकाश है।
किमि धरै हम उर कोष में सो अथकगुणमणिराश है ॥
पै जिन प्रयोजन सिद्धि की तुम नाम में ही शक्ति है।
यह चित्त में सरधान यातै नाम ही भक्ति है ॥१॥

ज्ञानावरणी दर्शनआवरणी भने।
कर्म मोहनी अन्तराय चारों भने ॥
लोकालोक विलोक्यो केवलज्ञान में।
इन्द्रादिक के मुकुट नये सुरथान में ॥

तब इन्द्र जान्यो अवधितें उठि सुरन युत वंदन भयो।
तुम पुन्य को प्रेर्यो हरि ह्वै मुदित धनपतिसौं चयो ॥
अब वेगि जाय रचो समवसृति सफल सुरपद को करो।
साक्षात श्री अरहंत के दर्शन करो कल्मष हरो ॥२॥

ऐसे वचन सुने सुरपतिके धनपती ।
चल आयो ततकाल मोद धारै अती ॥
वीतराग छवि देखि शब्द जय जय चयो ।
दै परदच्छिना बार बार बंदत भयो ॥
अति भक्ति भीनो नम्र-चित ह्वै समवशरण रच्यौ सही ।
ताकी अनूपम शुभगतीको, कहन समरथ कोऊ नहीं ॥
प्राकार तोरण सभा मण्डप कनक मणिमय छाजही ।
नग जड़ित गंधकुटी मनोहर मध्यभाग विराजही ॥३॥
सिंहासन तामध्य बन्यो अद्‌भुत दिपै ।
तापर वारिज रच्यो प्रभा दिनकर छिपै ॥
तीनछत्र सिर शोभित चौंसठ चमर जी ।
महाभक्तियुत ढोरत हैं तहां अमरजी ॥
प्रभु तरन तारन कमल ऊपर, अंतरीक्ष विराजिता ।
यह वीतराग दशा प्रतच्छ विलोकि भविजन सुख लिया ॥
मुनि आदि द्वादश सभा के भवि जीव मस्तक नायकैं ।
बहुभांति बारंबार पूजैं, नमैं गुणगण गायकैं ॥४॥
परमौदारिक दिव्य देव पावन सही ।
क्षुधा तृषा चिंता भय गद दूषण नहीं ॥
जन्म जरा मृति अरति शोक विस्मय नसे ।
राग दोष निद्रा मद मोह सबै खसे ॥
श्रमविन श्रमजल रहित पावन अमल ज्योतिस्वरूपजी ।
शरणागतनिकी अशुचिता हरि करत विमल अनूपजी ॥
ऐसे प्रभुकी शांति मुद्राको न्हवन जलतैं करें ।
'जस' भक्तिवश मन उक्ततें हम भानु ढिग दीपक धरें ॥५॥

तुमतौं सहज पवित्र यही निश्चय भयो।
तुम पवित्रताहेत नहीं मज्जन ठयो॥
मैं मलीन रागादिक मलतैं ह्वै रह्यो।
महामलिन तनमें वसुविधिवश दुख सह्यो॥
वीत्यो अनन्तो काल यह मेरी अशुचिता ना गई।
तिस अशुचिताहर एक तुमही हरहु बांछा चित ठई॥
अब अष्टकर्म विनाश सब मल रोषरागादिक हरो।
तनरूप कारागेहसैं उद्धार शिववासी करौ॥६॥
मैं जानन तुम अष्टकर्म हरि शिव गये।
आवागमन विमुक्त रागवर्जित भये॥
पर तथापि मेरो मनोरथ पूरत सही।
नयप्रमानतैं जानि महा साता लही॥
पापाचरण तजि न्हवन करता चित्त में ऐसे धरूं।
साक्षात श्रीअरहंतका मानो न्हवन परसन करूं॥
(यहां पर जलाभिषेक करें)
ऐसे विमल परिणाम होते अशुभ नसि शुभबंध तें।
विधि अशुभ नसि शुभबंधतें ह्वै शर्म सब विधि तासतैं॥७॥
पावन मेरे नयन भये तुम दरसतैं।
पावन पानि भये तुम चरननि परसतैं॥
पावन मन ह्वै गयो तिहारे ध्यानतैं।
पावन रसना मानी, तुम गुण गानतैं॥
पावन भई परजाय मेरी, भयो मैं पूरणधनी।
मैं शक्तिपूर्वक भक्ति कीनी, पूर्णभक्ति नहीं बनी॥
धन्य ते बड़भागि भवि तिन नीव शिवघरकी धरी॥

वर क्षीरसागर आदि जल मणिकुंभभरि भक्ति करी ॥८॥
विघनसघनवनदाहन-दहन प्रचण्ड हो ।
मोह महातमदलन प्रबल मारतण्ड हो ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश, आदि संज्ञा करो।
जगविजयी जमराज नाश ताको करो ॥
आनन्दकारण दुखनिवारण, परममंगलमय सही ।
मो सो पतित नहिं और तुमसो, पतिततार सुन्यो नहीं ॥
चिंतामणी पारस कल्पतरु, एकभाव सुखकार ही ।
तुम भक्तिनौका जे चढ़े ते, भये भवदधि पार ही ॥९॥

दोहा

तुम भवदधितें तरि गये, भये निकल अविकार।
तारतम्य इस भक्ति को, हमें उतारो पार ॥

पूरा पाठ पढ़कर निर्मल वस्त्र से प्रतिमाजी का मार्जन करें। और पीछे चरणोदक ग्रहण करें। पश्चात् ९ बार णमोकार मन्त्र पढ़कर नमस्कार करें ।

विनय पाठ

इह विधि ठाड़ो होय के, प्रथम पढ़ै जो पाठ ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशो कर्मजु आठ ॥१॥
अनन्त चतुष्टय के धनी, तुम ही हो सिरताज ।
मुक्तिवधू के कथ तुम, तीन भुवन के राज ॥२॥

तिहुं जगकी पीड़ाहरन, भवदधि शोषणहार।
ज्ञायक हो तुम विश्व के, शिवसुख के करतार ॥३॥
हरता अघअंधियार के, करता धर्मप्रकाश।
थिरतापद दातार हो, धरता निजगुण रास ॥४॥
धर्मामृत उर जलधिसों, ज्ञानभानु तुम रूप।
तुमरे चरणसरोजकों, नावत तिहुंजग भूप ॥५॥
मैं बंदौं जिनदेव को कर अति निर्मल भाव।
कर्मबंध के छेदने, और न कछू उपाव ॥६॥
भविजनकों भव-कूपतें, तुमही काढनहार।
दीनदयाल अनाथपति, आतम-गुण-भडार ॥७॥
चिदानंद निर्मल कियो, धोय कर्म-रज मैल।
सरल करो या जगत में, भविजन को शिव-गैल ॥८॥
तुम पदपकज पूजतें, विघ्न रोग टर जाय।
शत्रु मित्रता को धरें, विप निरविपता थाय ॥९॥
चक्री-खगधर-इन्द्र पद, मिलें आपतें आप।
अनुक्रमकर शिवपद लहैं, नेमसकल हनि पाप ॥१०॥
तुम बिन मैं व्याकुल भयो, जैसे जलबिन मीन।
जन्मजरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन ॥११॥
पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेव।
अंजन से तारे कुधी जय जय जय जिनदेव ॥१२॥

थकी नाव भवदधिविषै, तुम प्रभु पार करेय ।
खेवटिया तुम हो प्रभु, जय जय जय जिनदेव ॥१३॥
रागसहित जगमें रुल्यो, मिले सरागी देव ।
वीतराग भेटयो अबै, मेटो राग कुटेव ॥१४॥
कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यंच अज्ञान ।
आज धन्य मानुप भयो, पायो जिनवर थान ॥१५॥
तुम को पूजें सुरपति, अहिपति नरपति देव ।
धन्य भाग्य मेरो भयो, करनलग्यो तुम सेव ॥१६॥
अशरण के तुम शरण हो, निराधार आधार ।
मैं डूबत भव-सिन्धु में, खेउ लगाओ पार ॥१७॥
इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान ।
अपनो विरद निहारकें, कीजे आप समान ॥१८॥
तुमरी नेक सुदृष्टितैं, जग उतरत है पार ।
हाहा डूबो जात हों, नेक निहार निकार ॥१९॥
जो मैं कहऊँ औरसों, तो न मिटै उरझार ।
मेरी तो तोसों बनी, तातें करौं पुकार ॥२०॥
बंदों पांचों परमगुरु, सुरगुरु वंदत जास ।
विघनहरन मंगल करन, पूरन परम प्रकास ॥२१॥
चौबीसों जिनपद नमों, नमों शारदा माय ।
शिवमग साधक साधु नमि, रच्यो पाठ सुखदाय ॥२२॥

स्तुति

[कविवर भूधरदासजी]

अहो जगतगुरु देव, सुनिये अरज हमारी ।
तुम प्रभु दीनदयाल, मैं दुखिया संसारी ॥
इस भव-वनके माहिं, काल अनादि गमायो ।
भ्रम्यो चहूँ गतिमाहिं, सुख नहिं दुख बहु पायो ॥
कर्म-महारिपु जोर, एक न कान करै जी ।
मनमाने दुख देहिं, काहूसों नाँहिं डरैं जी ॥
कबहूँ इतर निगोद, कबहूँ नरक दिखावैं ।
सुर-नर-पशु गतिमाहिं, बहुविधि नाच नचावैं ॥
प्रभु इनको परसंग, भव-भव माहिं बुरो जी ।
जे दुख देखे देव, तुमसो नाहिं दुरो जी ॥
एक जनम की बात, कहि न सकौं सुनि स्वामी ।
तुम अनंत परजाय, जानत अंतरजामी ॥
मैं तो एक अनाथ, ये मिल दुष्ट घनेरे ।
कियो बहुत बेहाल, सुनियो साहिब मेरे ॥
ज्ञान महानिधि लूटि, रंक निबल करि डार्यो ।
इनही तुम मुझ माँहिं, हे जिन अंतर पार्यो ॥
पाप पुन्य मिलि दोय, पायनि बेड़ी डारी ।
तन-कारागृहमाहिं, मोहि दियो दुख भारी ॥
इनको नेक बिगार, मैं कछु नाहिं कियो जी ।

विन कारन जगवंद्य, बहु बिध वैर लियो जी ॥
अब आयौ तुम पास, सुन जिन सुजस तिहारो ।
नीति-निपुन जगराय, कीजै न्याव हमारो ॥
दुष्टन देहु निकाल, साधुन कों रखि लीजै ।
विनवै 'भूधरदास' हे प्रभु ढील न कीजै ॥

नित्य-नियम पूजा

ॐ जय जय जय । नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु ।
णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥१॥

ॐ ह्रीं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

चत्तारिमंगलं—अरहंता मगल, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पवज्जामि ।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा, पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा ।

ध्यायेत्पञ्च-नमस्कारं सर्व-पापैः प्रमुच्यते ॥१॥
अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा ।
यः स्मरेत्परमात्मानं स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥२॥
अपराजितमन्त्रोऽयं सर्व-विघ्न-विनाशनः ।
मङ्गलेषु च सर्वेषु प्रथमं मङ्गलं मतः ॥३॥
एसो पंच-णमोयारो सव्व-पाव-प्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं होइ मंगलं ॥४॥
अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः ।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥५॥
कर्माष्टक-विनिर्मुक्तं मोक्ष-लक्ष्मी-निकेतनम् ।
सम्यक्त्वादि-गुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥६॥
विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति शाकिनी-भूत-पन्नगाः ।
विषं निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥७॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

[सहस्रनामस्तोत्रं पठित्वा क्रमशोऽर्घ्यदशकं दद्यात् । समयाभावादधोलिखितं श्लोकं पठित्वा एकोऽर्घ्यो देयः ।]

उदक-चन्दन-तण्दुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः ।
धवल-मङ्गल-गान-रवाकुले जिन-गृहे जिननाथमहं यजे ॥

ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिनसहस्रनामेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं
स्याद्वाद–नायकमनन्त–चतुष्टयार्हम् ।

श्रीमूलसंघ-सुदृशां सुकृतैकहेतु-
जैनेन्द्र-यज्ञ-विधिरेष मयाऽभ्यधायि ।।८।।
स्वस्ति त्रिलोक-गुरवे जिन-पुङ्गवाय
स्वस्ति स्वभाव-महिमोदय-सुस्थिताय ।
स्वस्ति प्रकाश-सहजोर्जित-दृङ्मयाय
स्वस्ति प्रसन्न-ललिताद्भुत-वैभवाय ।।९।।
स्वस्त्युच्छलद्विमल- बोध-सुधा-प्लवाय
स्वस्ति स्वभाव-परभाव-विभासकाय ।
स्वस्ति त्रिलोकविततैक-चिदुद्गमाय
स्वस्ति त्रिकाल-सकलायत-विस्तृताय ।।१०।।
द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं
भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः ।
आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन्
भूतार्थ-यज्ञ-पुरुपस्य करोमि यज्ञम् ।।११।।
अर्हत्पुराण पुरुषोत्तम पावनानि
वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव ।
अस्मिञ्ज्वलद्विमल - केवल-बोधवह्नौ
पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ।।१२।।
[इति पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि]

स्वस्ति-मंगलम्

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः ।
श्रीसम्भवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः ।।
श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः ।
श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः ।।
श्रीपुष्पदन्तः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः ।
श्रीश्रेयान् स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः ।।
श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनन्तः ।
श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशान्तिः ।।
श्रीकुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः ।
श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः ।।
श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः ।
श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्धमानः ।।

[पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि]

नित्याप्रकम्पाद्भुत-केवलौघाः,
स्फुरन्मनःपर्यय - शुद्धबोधाः ।
दिव्यावधिज्ञान - बलप्रबोधाः,
स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।१।।
कोष्ठस्थ - धान्योपममेकबीजं,
संभिन्नसंश्रोतृ - पदानुसारि ।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः,

स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥२॥

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरा—
दास्वादन-घ्राण-विलोकनानि ।
दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्वहन्तः,
स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥३॥

प्रज्ञाप्रधानाः श्रवणाः समृद्धाः,
प्रत्येकबुद्धा दशसर्वपूर्वैः ।
प्रवादिनोऽष्टाङ्गनिमित्तविज्ञाः,
स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥४॥

जङ्घावलि-श्रेणि-फलाम्बु-तन्तु,
प्रसून-बीजाङ्कुर-चारणाह्वाः ।
नभोऽङ्गण-स्वैर-विहारिणश्च,
स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥५॥

अणिम्नि दक्षाःकुशलामहिम्नि,
लघिम्निशक्ताः कृतिनो गरिम्णि ।
मनो-वपूर्वाग्बलिनश्च नित्यं,
स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥६॥

सकामरूपित्व - वशित्वमैश्यं,
प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः ।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः,
स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥७॥

दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं,
घोरं तपो घोरपराक्रमस्था: ।
ब्रह्मापरं घोरगुणं चरन्त:,
स्वस्ति: क्रियासु: परमर्षयो न: ।।८।।
आमर्ष - सर्वौषधयस्तथाशी—
र्विषंविषा दृष्टिविषंविषाश्च ।
सखिल्ल-विड्-जल्ल-मलौषधीशा:,
स्वस्ति क्रियासु:परमर्षयो न: ।।९।।
क्षीरं स्रवन्तोऽत्र घृतं स्रवन्तो,
मधु स्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवन्त: ।
अक्षीणसंवास - महानसाश्च,
स्वस्ति क्रियासु: परमर्षयो न: ।।१०।।
[प्रतिश्लोकसमाप्तेरनन्तरं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्]
इति परमर्षिस्वस्तिमङ्गलविधानम् ।

देव-शास्त्र-गुरु-पूजा

[कविवर द्यानतरायजी]

अडिल्ल छंद

प्रथम देव अरहंत सुश्रुत सिद्धान्त जू ।
गुरु निरग्रन्थ महंत मुकतिपुरपंथ जू ।।

तीन रतन जगमाहिं सो ये भवि ध्याइये ।
तिनकी भक्तिप्रसाद परमपद पाइये ।।१।।

दोहा

पूजों पद अरहंत के पूजों गुरुपदसार ।
पूजों देवी सरस्वती नितप्रति अष्टप्रकार ।।२।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्रमम सन्निहितो भव भव वषट् ।

गीता छन्द

सुरपति उरग नरनाथ तिनकरि वन्दनीक सुपदप्रभा ।
अति शोभनीक सुवरण उज्जल देख छवि मोहित सभा ।
वर नीर क्षीरसमुद्र घट भरि अग्र तसु बहुविधि नचूं ।
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निरग्रंथ नित पूजा रचूं ।।१

दोहा

मलिन वस्तु हर लेत सब जल-स्वभाव मलछीन ।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ।।१।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्म जरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपा० ।।१।।

जे त्रिजग-उदर मझार प्रानी तपत अति दुद्धर खरे ।
तिन अहितहरन सुवचन जिनके परम शीतलता भरे ।।

तसु भ्रमरलोभित घ्राणपावन सरस चन्दन घसि सचूं ।
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निरग्रंथ नित पूजा रचूं ॥

दोहा

चंदन शीतलता करै तपत वस्तु परवीन ।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥२॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपा० ।

यह भवसमुद्र अपार तारण के निमित्त सुविधि ठई ।
अति दृढ़ परमपावन जथारथ भक्ति वर नौका सही ॥
उज्जल अखंडित सालि तंदुल पुंज धरि त्रयगुण जचूं ।
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निरग्रंथ नित पूजा रचूं ॥

दोहा

तंदुल सालि सुगंधि अति परम अखंडित बीन ।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥३॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपा० ।

जे विनयवंत सुभव्य-उर-अंबुजप्रकाशन भान हैं ।
जे एक मुख चारित्र भाषत त्रिजगमाहिं प्रधान हैं ॥
लहि कुंदकमलादिक पहुप भव भव कुवेदनसों बचूं ।
अरहंतश्रुत-सिद्धान्त गुरु-निरग्रंथ नित पूजा रचूं ॥

दोहा

विविध भाँति परिमल सुमन भ्रमर जास आधीन ।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥४॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्वो कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व० ।

अति सबल मदकंदर्प जाको क्षुधा-उरग अमान है ।
दुस्सह भयानक तासु नाशनको सुगरुडसमान है ॥
उत्तम छहों रसयुक्त नित नैवेद्य करि घृत में पचूं ।
अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निरग्रंथ नित पूजा रचूं ॥

दोहा

नानाविधि संयुक्तरस व्यंजन सरस नवीन ।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥५॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो क्षुधारोगविध्वंसनाय नैवेद्यं निर्वपा०

जे त्रिजग-उद्यम नाश कीने मोह-तिमिर महाबली ।
तिहि कर्मघाती ज्ञानदीप प्रकाशजोति प्रभावली ॥
इह भाँति दीप प्रजाल कंचनके सुभाजन में खचूं ।
अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निरग्रंथ नित पूजा रचूं ॥

दोहा

स्व-पर-प्रकाशक जोति अति दीपक तमकरि हीन ।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥६॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपा० ।

जो कर्म-ईंधन दहन अग्निसमूह सम उद्धत लसै ।
वर धूप तासु सुगंधिताकरि सकल परिमलता हंसै ॥
इह भाँति धूप चढ़ाय नित भव-ज्वलनमांहि नहीं पचूं ।
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निरग्रंथ नित पूजा रचूं ॥

दोहा

अग्निमाँहि परिमल दहन चंदनादि गुणलीन ।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥७॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपा० ।

लोचन सुरसना घ्रान उर उत्साह के करतार हैं ।
मोपै न उपमा जाय वरणी सकल फलगुणसार हैं ॥
सो फल चढ़ावत अर्थपूरन परम अमृतरस सचूं ।
अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निरग्रंथ नित पूजा रचूं ॥

दोहा

जे प्रधान फल फलविषैं पंचकरण-रस-लीन ।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥८॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपा० ।

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत पुष्प चरु दीपक धरूं ।
वर धूप निर्मल फल विविध बहु जनमके पातक हरूं ॥
इह भांति अर्घ चढ़ाय नित भवि करतशिव-पंकति मचूं ।

अरहंतश्रुत-सिद्धांत गुरु-निरग्रंथ नित पूजा रचूं ॥

दोहा

वसुविधि अर्घ संजोयकै अति उछाह मन कीन ।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥९॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपा० ।

जयमाला

दोहा

देव शास्त्र गुरु रतन शुभ रतन तीन करतार ।
भिन्न-भिन्न कहुँ आरती अल्प सुगुणविस्तार ॥१॥

पद्धरी छन्द

चउ कर्मसु त्रेसठ प्रकृतिनाशि,
जीते अष्टादश दोषराशि ।
जे परम सुगुण हैं अनंत धीर,
कहवत के छयालिस गुणगंभीर ॥
शुभ समवसरणशोभा अपार,
शत इंद्र नमत कर सीस धार ।
देवाधिदेव अरहंत देव,
बंदों मन वच तन करि सुसेव ॥

जिनकी ध्वनि ह्वै ओंकाररूप,
निरअक्षरमय महिमा अनूप ।
दश-अष्ट महाभाषा समेत,
लघुभाषा सात शतक सुचेत ॥
सो स्याद्वादमय सप्तभंग,
गणधर गूंथे बारह सुअंग ।
रवि शशि न हरै सो तम हराय,
सो शास्त्र नमों बहुप्रीति ल्याय ॥
गुरु आचारज उवझाय साध,
तन नगन रतनत्रयनिधि अगाध ।
संसार-देह वैराग धार,
निरवांछि तपैं शिवपद निहार ॥
गुण छत्तिस पच्चीस आठवीस,
भवतारन तरन जिहाज ईस ।
गुरुकी महिमा वरनी न जाय,
गुरु नाम जपों मन वचन काय ॥

सोरठा

कीजे शक्ति प्रमान शक्ति बिना सरधा धरै ।
'द्यानत' सरधावान अजर अमर पद भोगवै ॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

देव-शास्त्र-गुरु-भाषा-पूजा

[जुगल किशोर]

स्थापना

केवल-रवि-किरणों से जिसका,
सम्पूर्ण प्रकाशित है अन्तर ।
उस श्री जिनवाणी में होता,
तत्त्वों का सुन्दरतम दर्शन ॥
सद्दर्शन-बोध-चरण-पथ पर,
अविरल जो बढ़ते हैं मुनिगण ।
उन देव परम आगम गुरु को,
शत-शत वंदन शत-शत वंदन ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

इन्द्रिय के भोग मधुर विष सम,
लावण्यमयी कंचन काया ।
यह सब कुछ जड़ की क्रीड़ा है,
मैं अब तक जान नहीं पाया ॥
मैं भूल स्वय के वैभव को,
पर ममता में अटकाया हूं ।
अब सम्यक् निर्मल नीर लिये,

मिथ्या मल धोने आया हूं ॥१॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मिथ्यात्व मल विनाशनाय जलं निर्वपा०

जड़ चेतन की सब परिणति प्रभु,
अपने अपने में होती है ।
अनुकूल कहें प्रतिकूल कहें,
यह झूठी मन की वृत्ती है ॥
प्रतिकूल संयोगों में क्रोधित,
होकर संसार बढ़ाया है ।
संतप्त हृदय प्रभु ! चन्दन सम,
शीतलता पाने आया है ॥२॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो क्रोध मल विनाशनाय चंदनं निर्वपा० ।

उज्ज्वल हूं कुन्द धवल हूं प्रभु,
पर से न लगा हूं किंचित् भी ।
फिर भी अनुकूल लगें उन पर,
करता अभिमान निरन्तर ही ॥
जड़ पर झुक-झुक जाता चेतन,
की मार्दव की खंडित काया ।
निज शाश्वत अक्षय निधि-पाने,
अब दास चरण-रज में आया ॥३॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मान कषाय मल विनाशनाय अक्षतं निर्वपा०

यह पुष्प सुकोमल कितना है,
तन में माया कुछ शेष नहीं।
उर अन्तर का प्रभु ! भेद कहूं,
उसमें ऋजुता का लेश नहीं॥
चिंतन कुछ, फिर संभाषण कुछ,
किरिया कुछ की कुछ होती है।
स्थिरता निज में प्रभु पाऊं जो,
अन्तर का कालुप धोती है॥४॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो माया कषाय मल विनाशनाय पुष्पं निर्व०

अब तक अगणित जड़ द्रव्यों से,
प्रभु ! भूख न मेरी शान्त हुई।
तृष्णा की खाई खूब भरी,
पर रिक्त रही वह रिक्त रही॥
युग युग से इच्छा सागर में,
प्रभु ! गोते खाता आया हूं।
पंचेन्द्रिय मन के पट् रस तज,
अनुपम रस पीने आया हूं॥५॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो लोभ कषाय मल विनाशनाय नैवेद्यं निर्व०

जग के जड़ दीपक को अब तक,
समझा था मैंने उजियारा ।
झंझा के एक झकोरे में,
जो बनता घोर तिमिर कारा ।।
अतएव प्रभो ! यह नश्वर दीप,
समर्पण करने आया हूं ।
तेरी अन्तर लौ से निज अन्तर,
दीप जलाने आया हूं ।।६।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अज्ञान विनाशनाय दीपं निर्वपामि० ।

जड़ कर्म घुमाता है मुझको,
यह मिथ्या भ्रान्ति रही मेरी ।
मैं राग-द्वेष किया करता,
जब परिणति होती जड़ केरी ।।
यों भाव करम या भाव मरण,
सदियों से करता आया हूं ।
निज अनुपम गंध अनल से प्रभु,
पर गंध जलाने आया हूं ।।७।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो विभावपरिणति विनाशनाय धूपं नि०

जग में जिसको निज कहता मैं,
वह छोड़ मुझे चल देता है ।
मैं आकुल व्याकुल हो लेता,

व्याकुल का फल व्याकुलता है ।।
मैं शान्त निराकुल चेतन हूं,
है मुक्तिरमा सहचर मेरी ।
यह मोह तड़क कर टूट पड़े,
प्रभु ! सार्थक फल पूजा तेरी ।।८।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षपद प्राप्तये फलं निर्वपामि०

क्षण भर निज रस को पी चेतन,
मिथ्या मल को धो देता है ।
कापायिक भाव विनष्ट किये,
निज आनन्द अमृत पीता है ।
अनुपम सुख तब विलसित होता,
केवल रवि जगमग करता है ।
दर्शन बल पूर्ण प्रगट होता,
यह ही अर्हन्त अवस्था है ।।
यह अर्घ समर्पण करके प्रभु !
निज गुण का अर्घ बनाऊंगा ।
अरु निश्चित तेरे सदृश प्रभु !
अर्हन्त अवस्था पाऊंगा ।।९।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ पद प्राप्तये
अर्घं निर्वपामि० ।

स्तवन

भव वन में जी भर घूम चुका,
कण कण को जी भर भर देखा ।
मृग-सम मृग-तृष्णा के पीछे,
मुझको न मिली सुख की रेखा ॥१॥
झूठे जग के सपने सारे,
झूठी मन की सब आशायें ।
तन-यौवन-जीवन अस्थिर है,
क्षण भंगुर पल में मुरझाएं ॥२॥
सम्राट् महा-बल सैनानी,
उस क्षण को टाल सकेगा क्या ।
अशरण मृत काया में हर्षित,
निज जीवन डाल सकेगा क्या ॥३॥
संसार महा दुख-सागर के,
प्रभु दुखमय सुख-आभासों में ।
मुझको न मिला सुख क्षणभर भी,
कंचन-कामिनि-प्रासादों में ॥४॥
मैं एकाकी एकत्व लिए,
एकत्व लिए सब ही आते ।
तन-धन को साथी समझा था,
पर ये भी छांड़ चले जाते ॥५॥

मेरे न हुए ये मैं इन से,
अति भिन्न अखण्ड निराला हूं ।
निज में पर से अन्यत्व लिए,
निज सम रस पीने वाला हूं ॥६॥
जिसके शृङ्गारों में मेरा,
यह मंहगा जीवन घुल जाता ।
अत्यन्त अशुचि जड़ काया से,
इस चेतन का कैसा नाता ॥७॥
दिन रात शुभाशुभ भावों से,
मेरा व्यापार चला करता ।
मानस वाणी अरु काया से,
आश्रव का द्वार खुला रहता ॥८॥
शुभ और अशुभ की ज्वाला से,
झुलसा है मेरा अन्तस्तल ।
शीतल समकित किरणें फूटें,
संवर से जागे अन्तर्बल ॥९॥
फिर तप की शोधक वन्हि जगे,
कर्मों की कड़ियां टूट पड़ें ।
सर्वाङ्ग निजात्म प्रदेशों से,
अमृत के निर्झर फूट पड़ें ॥१०॥
हम छोड़ चलें यह लोक तभी,

लोकान्त विराजें क्षण में जा।
निज लोक हमारा वासा हो,
शोकांत बनें फिर हमको क्या ॥११॥
जागे मम दुर्लभ बोधि प्रभो !
दुर्नयतम सत्वर टल जावे।
बस ज्ञाता-दृष्टा रह जाऊँ,
मद-मत्सर मोह-विनश जावे ॥१२॥
चिर रक्षक धर्म हमारा हो,
हो धर्म हमारा चिर साथी।
जग में न हमारा कोई था,
हम भी न रहें जग के साथी ॥१३॥
चरणों में आया हूं प्रभुवर,
शीतलता मुझको मिल जावे।
मुरझाई ज्ञान लता मेरी,
निज अन्तरबल से खिल जावे ॥१४॥
सोचा करता हूं भोगों से,
बुझ जावेगी इच्छा ज्वाला।
परिणाम निकलता है लेकिन,
मानों पावक में घी डाला ॥१५॥
तेरे चरणों की पूजा से,
इन्द्रिय सुख की ही अभिलाषा।

अब तक न समझ ही पाया प्रभु !
    सच्चे सुख की भी परिभाषा ॥१६॥
तुम तो अविकारी हो प्रभुवर !
    जग में रहते जग से न्यारे ।
अतएव झुके तव चरणों में,
    जग के माणिक मोती सारे ॥१७॥
स्याद्वाद मयी तेरी वाणी,
    शुधनय के झरने झरते हैं ।
इस पावन नौका पर लाखों,
    प्राणी भव-वारिधि तिरते हैं ॥१८॥
हे गुरुवर ! शाश्वत सुख-दर्शक,
    यह नग्न स्वरूप तुम्हारा है ।
जग की नश्वरता का सच्चा,
    दिग्दर्श कराने वाला है ॥१९॥
जब जग विषयों में रच-पच कर,
    गाफिल निद्रा में सोता हो ।
अथवा वह शिव के निष्कंटक,
    पथ में विष-कंटक बोता हो ॥२०॥
हो अर्ध निशा का सन्नाटा,
    वन में वनचारी चरते हो ।
तब शान्त निराकुल मानव तुम,

तत्त्वों का चिंतवन करते हो ॥२१॥
करते तप शैल नदी तट पर,
तरु तल वर्षा की झड़ियों में।
समता रस पान किया करते,
सुख-दुख दोनों की घड़ियों में ॥२२॥
अन्तर ज्वाला हरती वाणी,
मानों झड़ती हों फुलझड़ियां।
भव बन्धन तड़ तड़ टूट पड़े,
खिल जावें अन्तर की कलियां ॥२३॥
तुम सा दानी क्या कोई है,
जग को देदीं जग की निधियां।
दिन-रात लुटाया करते हो,
सम-शम की अविनश्वर मणियाँ ॥२४॥
हे निर्मल देव! तुम्हें प्रणाम,
हे ज्ञान दीप आगम! प्रणाम।
हे शान्ति त्याग के मूर्तिमान,
शिव-पथ-पंथी गुरुवर! प्रणाम ॥२५॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ निर्वपा०।

बीस तीर्थंकर पूजा

[कविवर द्यानतरायजी]

दीप अढाई मेरु पन सब तीर्थंकर बीस।
तिन सबकी पूजा करूँ मन वच तन धरि सीस ।।१।।

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्कराः अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्कराः! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः।
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्कराः! अत्र मम सन्निहिता भव भव वषट्।

इन्द्र-फणीन्द्र-नरेन्द्रवंद्य पद निर्मल धारी।
शोभनीक संसार सार गुण हैं अविकारी ।।
क्षीरोदधि सम नीरसों (हो) पूजों तृषा निवार।
सीमंधर जिन आदि दे बीस विदेह मंझार ।।
श्रीजिनराज हो भव तारणतरण जहाज ।।१।।

ॐ ह्रीं सीमंधर-युगमन्धर-बाहु-सुबाहु-संजात-स्वयंप्रभ-वृषभानन-अनन्तवीर्य-सूरप्रभ-विशालकीर्ति-वज्रधर-चन्द्रानन-भद्रबाहु-भुजङ्गम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीरषेण-महाभद्र-देवयशोऽजितवीर्याश्चेतिविंशतिविद्यमानतीर्थङ्करेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्व०।

तीन लोक के जीव पाप आताप सताये।
तिनकों साता दाता शीतल वचन सुहाये ।।
बावन चंदन सों जजूं (हो) भ्रमन तपन निरवार ।।सीमं०।।

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो भवतापविनाशनाय चंदनं०

ह संसार अपार महासागर जिनस्वामी ।
तातैं तारे बड़ी भक्ति-नौका जगनामी ।।
तन्दुल अमल सुगंधसों (हो) पूजों तुम गुणसार ।।सीमं०।।

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपा० ।

भविक-सरोज-विकाश निद्य-तमहर रवि से हो ।
जति-श्रावक आचार कथन को तुम्हीं बड़े हो ।।
फूल सुवास अनेकसों (हो) पूजों मदनप्रहार ।।सीमं०।।

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपा० ।

काम-नाग विषधाम नाशको गरुड कहे हो ।
क्षुधा महादवज्वाल तासुको मेघ लहे हो ।।
नेवज बहुघृत मिष्टसों (हो) ज्ञानज्योति करतार ।।सीमं०।।

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपा० ।

उद्यम होन न देत सर्व जगमांहि भर्यो है ।
मोह-महातम घोर नाश परकाश कर्यो है ।।
पूजों दीप प्रकाशसों (हो) ज्ञानज्योति करतार ।।सीमं०।।

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपा०

कर्म आठ सब काठ भार विस्तार निहारा ।

ध्यान अगनिकर प्रगट सरब कीनो निरवारा ।।
धूप अनूपम खेवतें (हो) दु:ख जलें निरधार ।।सीमं०।।
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशनितीर्थङ्करेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपा०

मिथ्यावादी दुष्ट लोभऽहंकार भरे हैं ।
सबको छिन में जीत जैन के मेर खड़े हैं ।।
फल अति उत्तमसों जजों (हो) वांछित फलदातार ।।सीमं०।।
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपा०

जल फल आठों दर्वं अरघ कर प्रीति धरी है ।
गणधर इन्द्रनिहूतें थुति पूरी न करी है ।।
'द्यानत' सेवक जान के (हो) जगतें लेहु निकार ।।सीमं०।।
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपा०

जयमाला

सोरठा

ज्ञान-सुधाकर चन्द भविक-खेत हित मेघ हो ।
भ्रम-तम भान अमन्द तीर्थङ्कर बीसों नमों ।।

चौपाई

सीमंधर सीमंधर स्वामी,
जुगमंधर जुगमंधर नामी ।

बाहु बाहु जिन जगजन तारे,
करम सुबाहु बाहुबल दारे ॥१॥
जात सुजातं केवलज्ञानं,
स्वयंप्रभू प्रभु स्वयं प्रधानं।
ऋषभानन ऋषि भानन दोषं,
अनन्तवीरज वीरजकोपं ॥२॥
सौरीप्रभ सौरीगुणमालं,
सुगुण विशाल विशाल दयालं।
वज्रधार भवगिरि वज्जर हैं,
चन्द्रानन चन्द्रानन वर हैं ॥३॥
भद्रबाहु भद्रनिके करता,
श्रीभुजंग भुजंगम हरता।
ईश्वर सबके ईश्वर छाजें,
नेमिप्रभु जस नेमि विराजें ॥४॥
वीरसेन वीर जग जानै,
महाभद्र महाभद्र बखानै।
नमों जसोधर जसधरकारी,
नमों अजित वीरज बलधारी ॥५॥
धनुष पाँचसै काय विराजें,
आव कोडिपूरव सब छाजें।
समवसरण शोभित जिनराजा,

भव-जल-तारनतरनजिहाजा ॥६॥
सम्यक रत्न-त्रयनिधि दानी,
लोकालोक प्रकाशक ज्ञानी ।
शत इन्द्रनिकरि वंदित सौहैं,
सुर नर पशु सबके मन मोहैं ॥७॥

दोहा

तुमको पूजै वंदना करै, धन्य नर सोय ।
'द्यानत' सरधा मन धरै, सो भी धरमी होय ॥८॥
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

देव शास्त्र गुरु-विद्यमान बीस तीर्थंकर और सिद्ध पूजा

[सच्चिदानन्द कृत]

दोहा

देव शास्त्र गुरु नमन करि, बीस तीर्थंकर ध्याय ।
सिद्ध शुद्ध राजत सदा, नमूं चित्त हुलसाय ॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरु समूह श्री विद्यमान विंशति तीर्थंकर श्री सिद्ध समूह अत्रावतरअवतर, अत्र तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अनादिकाल से जग में स्वामिन् जल से शुचिता को माना ।

शुद्ध निजातम सम्यक रत्नत्रय निधि को नहिं पहिचाना ॥
अब निर्मल रत्नत्रय जल लेकर, श्री देव शास्त्रगुरु को ध्याऊं ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊं ॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्र गुरु समूह श्री विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह, श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यों जलम् नि०स्वाहा ।

भव आताप मिटावन की निज में ही क्षमता समता है ।
अनजाने अब तक मैंने, पर मैं की झूठी ममता है ॥
चन्दन सम शीतलता पाने, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊं ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊं ॥चन्दम्॥
अक्षय पद बिन फिरा जगत की, लख चौरासी योनि मैं ।
अष्ट कर्म के नाश करन को, अक्षत तुम ढिग लाया मैं ॥
अक्षय निधि निज की पाने को श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ ॥
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊं ॥अक्षतं॥
पुष्प सुगंधी से आतम ने शील स्वभाव नसाया है ।
मनमथ बाणों से विंध करके चहुंगति दुःख उपजाया है ॥
स्थिरता निज पाने को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊं ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊं ॥पुष्पम्॥
षट् रस मिश्रित भोजन से, ये भूख न मेरी शांत हुई ।
आतम रस अनुपम चखने से, इन्द्रिय मन इच्छा शमन हुई ॥
सर्वथा भूख के मेटन को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊं ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊं ॥नैवेद्यम्॥
जड़ दीप विनश्वर को अब तक समझा था मैंने उजियारा ।
निज गुण दर्शायक ज्ञान दीप से, मिटा मोह का अंधियारा ॥
ये दीप समर्पित करके मैं, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊं ।

विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊं ।।दीपम।।
ये धूप अनल में खेने से, कर्मों को नहीं जलाएगी।
निज में निज की शक्ति ज्वाला, जो राग द्वेष नसाएगी ।।
उस शक्ति दहन प्रगटाने को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊं।
विद्यमान श्री वीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊं।।धूपम्।।
पिस्ता, बादाम, श्रीफल लवंग, तुव चरण निकट मैं ले आया।
आतम रस पीने निजगुणफल मम मन अब उनमें ललचाया।।
अब मोक्ष महाफल पाने को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊं।
विद्यमान श्री वीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊं ।।फलम्।।
अष्टम वसुधा पाने को, कर में ये आठों द्रव्य लिये।
सहज शुद्ध स्वाभाविकता में, निज में निज गुण प्रगट भये ।।
ये अर्घ समर्पण करके मैं, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊं।
विद्यमान श्री वीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊं ।।अर्घम्।।

जयमाला

नसे घातिया कर्म अरहंत देवा,
करे सुर असुर नर मुनि नित्य सेवा।
दरस ज्ञान सुख बल अनन्त के स्वामी,
छियालीस गुण युत महा ईश नामी।
तेरी दिव्य वाणी सदा भव्य मानी,
महामोह विध्वंसिनी मोक्षदानी।
अनेकान्तमय द्वादशांगी बखानी,
नमो लोक माता श्री जैन बानी।

बिरागी अचाराज उवज्झाय साधू,
दरश ज्ञान भंडार समता अराधू।
नगन वेशधारी सु एका विहारी,
निजानन्द मंडित मुकतपथ प्रचारी।
विदेह क्षेत्र में तीर्थंकर वीस राजे,
विहरमान बन्दू सभी पाप भाजे।
नमूं सिद्ध निरभय निरामय सुधामी,
अनाकुल समाधान सहजाभिरामी ॥

देव शास्त्र गुरु वीस तीर्थंकर, सिद्ध हृदय विच धरले रे।
पूजन ध्यान गान गुण करके, भवसागर जिय तरले रे ॥अर्घम्॥
भूत भविष्यत् वर्तमान की तीस चौबीसी मैं ध्याऊं।
चैत्य चैत्यालय कृत्रिमाकृत्रिम तीन लोक में मन लाऊं ॥

ॐ ह्रीं त्रिकाल सबंधी तीस चौबीसी, त्रिलोक संबंधी कृत्रिमाकृत्रिम चैत्यचैत्यालय येभ्यो अर्घं नि०स्वाहा।

चैत्य भक्ति आलोचना चाहूं, कायोत्सर्ग अघ नाशन हेत।
कृत्रिमाकृत्रिम तीन लोक में, राजत हैं जिनबिंब अनेक ॥
चतु निकाय के देव जजें, ले अष्ट द्रव्य निज कुटुम्ब समेत।
निज शक्ति अनुसार जजूं मैं, कर समाधि पाऊं शिव खेत ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण)

पूर्व मध्य अपरान्ह की बेला पूर्वाचार्यों के अनुसार।
देव वन्दना करूं भाव से सकल कर्म की नाशनहार ॥
पंच महागुरु सुमिरन करके कायोत्सर्ग करूं सुखकार।
सहज स्वभाव शुद्ध लख अपना, जाऊंगा, मैं अब भवपार ॥

(कायोत्सर्ग पूर्वक नौ बार णमोकार मंत्र का जाप करें)

षोडश-कारण भावना भाऊं, दशलक्षण हिरदय धारूं।
सम्यक् रत्नत्रय गहि करके, अष्ट करम को वन जारूं ॥
ॐ ह्रीं षोडशकारण भावना, दशलक्षण धर्म, सम्यकरत्नत्र-येभ्यो अर्घम् नि०स्वाहा।

कृत्रिमाकृत्रिम-जिनचैत्य-पूजा

कृत्याकृत्रिम-चारु-चैत्यनिलयान् नित्यं त्रिलोकीगतान् ।
वन्दे भावन-व्यन्तरान् द्युतिवरान् स्वर्गामरावासगान् ॥
सद्गन्धाक्षत-पुष्प-दाम-चरुकैः सद्दीप-धूपैः फलै-
र्द्रव्यैनीरमुखैर्यजामि सततं दुष्कर्मणां शान्तये ॥१॥
[ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धिजिनविम्बेभ्योऽर्घंनिर्व०

वर्षेषु वर्षान्तर-पर्वतेषु ।
नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु ।
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके ।
सर्वाणि बन्दे जिनपुङ्गवानाम् ॥२॥
अवनि-तल-गतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां ।
वन-भवन-गतानां दिव्य-वैमानिकानाम् ।
इह मनुज-कृतानां देवराजार्चितानां ।
जिनवर-निलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥३॥

जम्बू-धातकि-पुष्करार्ध-वसुधा-क्षेत्र-त्रये ये भवा—

श्चन्द्राम्भोज-शिखण्डिकण्ठ-कनक-प्रावृड्घनाभाजिनाः ।
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षणधरा दग्धाष्ट-कर्मेन्धनाः ।
भूतानागत-वर्तमान-समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥४
श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे ।
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर-रुचके कुण्डले मानुषाङ्के ।
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ दधिमुख-शिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके ।
ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥५
द्वौ कुन्देन्दु-तुषार-हार-धवलौ द्वाविन्द्रनील-प्रभौ ।
द्वौ बन्धूक-सम-प्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ ।
शेषाः षोडश जन्म-मृत्यु-रहिताः सन्तप्त-हेम-प्रभा-
स्ते संज्ञान-दिवाकराः सुर-नुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ॥६
ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धि-कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयेभ्योऽर्घं निर्व० ।

इच्छामि भंते ! चेइयभत्ति-काउसग्गो कओ तस्सालोचेउं । अहलोय-तिरियलोय-उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसु वि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय-कप्पवासिय त्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धूवेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ह्लाणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमस्संति । अहमवि इह संतो तत्थ संताइ णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि

णमंसामि । दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ-
गमणं समाहिमरणं जिणगुणसम्पत्ती होउ मज्झं ।

अथ पौर्वाह्निक-माध्याह्निक-आपराह्निक देववन्दनायां पूर्वा-
चार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजा-वन्दना-स्तवसमेतं श्री
पंचमहागुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

ताव कायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।
णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।

सिद्धपूजा

द्रव्याष्टक

ऊर्ध्वाधोरयुतं सबिन्दु सपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं,
वर्गापूरित-दिग्गताम्बुज-दलं तत्सन्धि-तत्त्वान्वितम् ।
अन्तःपत्र-तटेष्वनाहतयुतं ह्रींकार-संवेष्टितं,
देवं ध्यायति यः स मुक्ति-सु-भगो वैरीभ-कण्ठीरवः ॥१

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर
अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ
ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र मम सन्नि-
हितो भव भव वषट् ।

निरस्त-कर्म-सम्बन्धं सूक्ष्मं नित्यं निरामयम् ।
वन्देऽहं परमात्मानममूर्तमनुपद्रवम् ॥२

सिद्धयन्त्रस्थापनम्

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्म-गम्यं,
हान्यादि-भाव-रहितं भव-वीत-कायम् ।
रेवापगा-वर-सरो यमुनोद्भवानां,
नीरैर्यजे कलशगैर्वर-सिद्ध-चक्रम् ॥३॥

ॐ ह्रीं क्षायिकसम्यक्त्व-अनन्तज्ञान-अनन्तदर्शन-अनन्तवीर्य-अगुरुलघुत्व - अवगाहनत्व-सूक्ष्मत्व - निराबाधत्वगुणसम्पन्न— सिद्ध चक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपा०

आनन्द-कन्द-जनकं घन कर्म-मुक्तं,
सम्यक्त्व-शर्म-गरिमं जननार्ति-वीतम् ।
सौरभ्य-वासित-भुवं हरि-चन्दनानां,
गन्धैर्यजे परिमलैर्वर-सिद्ध-चक्रम् ॥४॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

सर्वावगाहन-गुणं सुसमाधि-निष्ठ,
सिद्धंस्वरूप-निपुण कमल विशालम् ।
सौगन्ध्य-शालि-वनशालि वराक्षतानां,
पुञ्जैर्यजे शशि-निभैर्वर-सिद्ध-चक्रम् ॥५॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

नित्यं स्वदेह-परिमाणमनादिसंज्ञं,

द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम् ।
मन्दार-कुन्द-कमलादि वनस्पतीनां,
पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वर-सिद्ध-चक्रम् ॥६॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने-कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

ऊर्ध्वं स्वभाव-गमन सुमनो-व्यपेतं,
ब्रह्मादि-बीज-सहित गगनावभासम् ।
क्षीरान्न-साज्य-वटकै रस-पूर्ण-गर्भै,
नित्यं यजे चरुवरैर्वर-सिद्ध-चक्रम् ॥७॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविध्वंसनाय नैवेद्यं निर्वपा० ।

आतङ्क-शोक-भय- रोग-मद - प्रशान्तं,
निर्द्वन्द्व-भाव-धरणं महिमा-निवेशम् ।
कर्पूर-वर्ति-बहुभिः कनकावदातैर्दीपै,
र्यजे रुचिवरैर्वर-सिद्ध-चक्रम् ॥८॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपा० ।

पश्यन्समस्त-भुवनं युगपन्नितान्तं,
त्रैकाल्य-वस्तु-विषये निविड-प्रदीपम् ।
सद्द्रव्य-गन्ध-घनसार- विमिश्रितानां,
धूपैर्यजे परिमलैर्वर-सिद्ध-चक्रम् ॥९॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं

सिद्धासुराधिपति - यक्ष-नरेन्द्र - चक्रै,
ध्येयं शिवं सकल-भव्य-जनैः सुवन्द्यम् ।
नारिङ्ग-पूग- कदली- फल-नारिकेलैः,
सोऽहं यजे वरफलैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥१०॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रत-गणैः संगं वरं चन्दनं,
पुष्पौघं विमलं सदक्षत-चयं रम्यं चरुं दीपकम् ।
धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठ फलं लब्धये,
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वाञ्छितम् ॥११॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं० ।

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं,
सूक्ष्म-स्वभाव-परमं यदनन्तवीर्यम् ।
कर्मौघ-कक्ष-दहनं सुख-शस्य-बीजं,
वन्दे सदा निरुपमं वर-सिद्ध-चक्रम् ॥१२॥

कर्माष्टक-विनिर्मुक्तं मोक्ष-लक्ष्मी-निकेतनम् ।
सम्यक्त्वादि-गुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥१३॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घं निर्वपा०

त्रैलोक्येश्वर-वंदनीय-चरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं,
यानाराध्य निरुद्ध-चण्ड-मनसः सन्तोऽपि तीर्थङ्कराः ।

सत्सम्यक्त्व - विबोध-वीर्य- विशदाव्याबाधताद्यैर्गुणै,
र्युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥१॥
(पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

जयमाला

विराग सनातन शान्त निरंश,
निरामय निर्भय निर्मल हंस।
सुधाम विबोध-निधान विमोह,
प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥
विदूरित - संसृति - भाव निरङ्ग,
समामृत - पूरित देव विसङ्ग ।
अबन्ध कषाय - विहीन विमोह,
प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥
निवारित - दुष्कृत - कर्म - विपाश,
सदामल - केवल - केलि - निवास ।
भवोदधि-पारग शान्त विमोह,
प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥
अनन्त - सुखामृत - सागर - धीर,
कलङ्क - रजो - मल-भूरि-समीर ।
विखण्डित-काम विराम विमोह,
प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥

विकार - विवर्जित तर्जित - शोक,
विबोध-सुनेत्र-विलोकित लोक ।
विहार विराव विरङ्ग विमोह,
प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥
रजोमल - खेद - विमुक्त विगात्र,
निरन्तर नित्य सुखामृत-पात्र ।
सुदर्शन - राजित नाथ विमोह,
प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥
नरामर - वन्दित निर्मल भाव,
अनन्त-मुनीश्वर-पूज्य विहाव ।
सदोदय विश्व महेश विमोह,
प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥
विदम्भ वितृष्ण विदोष विनिद्र,
परापर शङ्कर सार वितन्द्र ।
विकोप विरूप विशङ्क विमोह,
प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥
जरा - मरणोज्झित वीत - विहार,
विचिन्तित निर्मल निरहंकार ।
अचिन्त्य - चरित्र विदर्प विमोह,
प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥
विवर्ण विगन्ध विमान विलोभ,

विमाय विकाय विशब्द विशोभ ।
अनाकुल केवल सर्व विमोह,
प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ।।

घत्ता

असम - समयसारं चारु - चैतन्य - चिन्हं
पर - परिणति - मुक्तं पद्मनंदीन्द्र - वन्द्यम् ।
निखिल - गुण - निकेतं सिद्धचक्रं विशुद्ध
स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिम् ।।
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं निर्वपा०

समुच्चय चौवीसी पूजा

वृषभ अजित सम्भव अभिनन्दन,
सुमति पदम सुपासजिनराय ।
चंद पुहुप शीतल श्रेयांस नमि,
वासुपूज्य पूजितसुरराय ।।
विमल अनन्त धर्म जस उज्ज्वल,
शांति कुंथु अर मल्लि मनाय ।
मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्वप्रभु,
वर्द्धमान पद पुष्प चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र अवतर अवतर, संवौषट् आह्वाननं। ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ, ठः ठः स्थापनं। ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

मुनिमनसम उज्ज्वल नीर, प्रासुक गंध भरा।
भरि कनककटोरी धीर, दीनी धार धरा॥
चौवीसों श्रीजिनचंद, आनंदकंद सही।
पद जजत हरत भव-फंद, पावत मोक्षमही॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं।

गोशीर कपूर मिलाय, केशर रंगभरी।
जिन चरनन देत चढ़ाय, भव-आताप हरी॥ चौवीसों०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्व०

तन्दुल सित सोमसमान, सुन्दर अनियारे।
मुकता-फलकी उनमान, पुंजधरों प्यारे॥ चौवीसों०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व०

वरकंज कदंब कुरंड, सुमन सुगंध भरे।
जिन अग्र धरों गुनमंड, काम-कलंक हरे॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व०

मनमोहन मोदक आदि, सुन्दर सद्य बने।
रसपूरित प्रासुक स्वाद, जजत क्षुधादि हने॥ चौवीसों०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व०

तमखंडन दीप जगाय, धारों तुम आगै ।
सब तिमिरमोह क्षयजाय, ज्ञान-कला जागै ।।चौवीसों०
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्व०
दशगंध हुताशनमांहि, हे प्रभु खेवत हों ।
मिस धूम करम जरिजांहि, तुम पद सेवत हों ।।चौवीसों
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति०
शुचि पक्व सुरसफल सार, सब ऋतुके ल्यायो।
देखत दृगमनको प्यार, पूजत सुख पायो ।। चौवीसों०
ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरांतेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व०
जलफल आठों शुचिसार, ताको अर्घ करों ।
तुम को अरपों भवतार, भवतरि मोक्ष वरों ।।चौवीसों०
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व०

जयमाला

दोहा

श्रीमत तीरथनाथ-पद, माथ नाय हित हेत ।
गाऊँ गुणमाला अबै, अजर अमरपद देत ।।१।।

घत्ता

जय भवतमभंजन जनमनकंजन,
रंजन दिनमनि स्वच्छ करा ।

शिवमगपरकाशक अरिगननाशक,
चौवीसों जिनराज वरा ॥२॥

पद्धरि छन्द

जय ऋषभदेव ऋषिगन नमंत,
जय अजित जीत वसुअरि तुरंत।
जय संभव भव-भय करत चूर,
जय अभिनंदन आनंद-पूर ॥३॥
जय सुमति सुमति-दायक दयाल,
जय पद्म पद्मदुतितन रसाल।
जय जय सुपास भवपास नाश,
जय चन्द चन्द तनदुतिप्रकाश ॥४॥
जय पुष्पदंत दुतिदंत-सेत,
जय शीतल शीतलगुन-निकेत।
जय श्रेयनाथ नुतसहसभुज्ज,
जय वासवपूजित वासुपुज्ज ॥५॥
जय विमल विमलपद देनहार,
जय जय अनंत गुनगन अपार।
जय धर्म धर्म शिवशर्म देत,
जय शांति शांति पुष्टी करेत ॥६॥
जय कुंथु कुंथुवादिक रखेय,

जय अर जिन वसु अरि क्षय करेय।
जय मल्लि मल्ल हत मोहमल्ल,
जय मुनिसुव्रत व्रतशल्ल दल्ल ।।७।।
जय नमि नित वासव-नुत सपेम,
जय नेमिनाथ वृषचक्र नेम ।
जय पारसनाथ अनाथनाथ,
जय वर्द्धमान शिवनगर साथ ।।८।।

घत्ता

चौबीस जिनंदा आनंदकंदा पापनिकंदा सुखकारी।
तिनपद जुगचंदा उदय अमंदा वासव वंदा हितधारी ।।
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा
भुक्ति मुक्तिदातार, चौबीसों जिनराजवर ।
तिन पद मन वचधार, जो पूजै सो शिव लहैं ।।
इत्याशीर्वाद:

श्री आदिनाथ जिनपूजा

अडिल्ल

परम पूज्य वृषभेश स्वयंभूदेव जू,
पिता नाभि मरुदेवि करैं सुर सेव जू

कनक-वरण तन तुङ्ग धनुष पन-शत तनो,
कृपा-सिंधु इत आइ तिष्ठ मम दुख हनो ।।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

अष्टक

छन्द

द्रुतविलंबित तथा सुन्दरी

हिमवनोद्भव-वारि सुधारिकैं,
जजत हों गुन-बोध उचारिकैं ।।
परम-भाव सुखोदधि दीजिए,
जनम मृत्यु जरा छय कीजिए ।।
ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेंद्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्व०
मलय-चन्दन दाह-निकंदनं,
घसि उभै करमें करि वंदनं ।
जजत हों प्रशमाश्रम दीजिए,
तपत ताप त्रिधा छय कीजिए ।।
ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्व०
अमल तंदुल खण्ड-विवर्जित,
सित निशेश-हिमामिय-तर्जितं ।
जजत हों तसु पुंज धरायजी,

अखय संपति द्यो जिनरायजी ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्रायअक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व०

कमल चम्पक केतकि लीजिए,
मदन-भंजन भेट धरीजिए ।
परम शील महा सुखदाय हैं,
समर-सूल निमूल नशाय हैं ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं

सरस मोदन मोदक लीजिए,
हरन भूख जिनेश जजीजिए ।
सकल आकुल-अन्तक-हेतु हैं,
अतुल शांत-सुधारस देतु हैं ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं

निविड मोह-महातम छाइयो,
स्व-पर-भेद न मोहि लखाइयो ।
हरन-कारन दीपक तास के,
जजत हों पद केवल भास के ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं

अगर-चन्दन आदिक ल्येयकें,
परम पावन गंध सुखेयकें ।
अगनि-संग जरै मिस धूम के,
सकल कर्म उड़े यह घूमके ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्रायअष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व०

सुरस पक्व मनोहर पावने,
विविध लै फल पूज रचावने ।
त्रिजगनाथ कृपा अब कीजिए,
हमहि मोक्ष महाफल दीजिए ।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व०

जल-फलादि समस्त मिलायकें,
जजत हों पद मंगल गायके ।
भगत-वत्सल दीन-दयालजी,
करहु मोहि सुखी लखि हालजी ।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्व०

पञ्चकल्याणक

द्रुतविलम्बित तथा सुन्दरी

असित दोज अषाढ़ सुहावनी,
गरभ-मंगल को दिन पावनी ।
हरि-सची पितु-मातहिं सेवही,
जजत हैं हम श्रीजिनदेव ही ।।

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णद्वितीयादिने गर्भमङ्गलप्राप्ताय श्रीवृषभजिनदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अंसित चैत सुनौमि सुहाइयो,
जनम-मंगल ता दिन पाइयो।
हरि महागिरिपै जजियो तबै,
हम जजैं पद-पंकज को अबै ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवमीदिने जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीवृषभनाथाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

असित नौमि सुचैत धरे सही,
तप विशुद्ध सबै समता गही।
निज सुधारससों भर लाइयो,
हम जजैं पद अर्घ चढ़ाइयो ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवमीदिने दीक्षामङ्गलप्राप्ताय श्रीवृषभनाथाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

असित फागुन ग्यारसि सोहनों,
परम केवल ज्ञान जग्यो भनो।
हरि-समूह जजैं तहँ आइकैं,
हम जजैं इत मंगल गाइकैं ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां ज्ञानसाम्राज्यमङ्गलप्राप्ताय श्री वृषभनाथाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

असित चौदसि माघ विराजई,
परम मोक्ष सुमगल साजई।
हरि-समूह जजे कैलासजी,
हम जजैं अति धार हुलासजी ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षमङ्गलप्राप्ताय श्री वृषभनाथाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

घत्ताछन्द

जय जय जिन-चंदा आदि-जिनंदा,
हनि भव-फंदा-कंदा जू ।
वासव-शत-वंदा धरि आनंदा,
ज्ञान अमंदा नंदा जू ॥

छन्द मोतियदाम

त्रिलोक-हितंकर पूरन पर्म,
प्रजापति विष्णु चिदातम धर्म ।
जतीसुर ब्रह्म-विदांवर बुद्ध,
वृषंक अशंक क्रियांबुधि शुद्ध ॥
जबै गर्भागम,मंगल जान,
तबै हरि हर्ष हिये अति आन ।
पिता जननीपद सेव करेय,
अनेक प्रकार उमंग भरेय ॥
जये जब हौ तब ही हरि आय,
गिरींद्रविषै किय न्हौंन सुजाय ।

नियोग समस्त किये तित सार,
सुलाय प्रभु पुनि राज-अगार ॥
पिता-कर सौंपि कियो तित नाट,
अमंद अनंद समेत विराट।
सुथान पयान कियो फिर इंद्र,
इहां सुर-सेव करैं जिन-चंद ॥
कियो चिरकाल सुखास्रित राज,
प्रजा सब आनंद को तित साज।
सुलिप्त सुभोगनि में लखि जोग,
कियो हरि ने यह उत्तम योग ॥
निलजन नाच रच्यो तुम पास,
नवों रस-पूरित भाव विलास।
बजै मिरदंग दृमं दृम जोर,
चलै पग झारि झनांझन झोर ॥
घनाघन घंट करै धुनि मिष्ट,
बजै मुहचंग सुरान्वित पुष्ट।
खड़ी छिन पास छिनहि आकाश,
लघू छिन दीरघ आदि विलास ॥
ततच्छन ताहि विलै अविलोय,
भये भवतैं भय-भीत बहोय।
सुभावत भावन बारह भाय,

तहाँ दिव-ब्रह्म-ऋषीश्वर आय ॥
प्रबोध प्रभू सुगये निज धाम,
तबै हरि आय रची शिवकाम ।
कियो कचलोंच पिराग-अरन्य,
चतुर्थमज्ञान लह्यो जग-धन्य ॥
धरौ तब योग छ मास प्रमान,
दियो शिरियंस तिन्हें इख दान ।
भयो जब केवलज्ञान जिनद्र,
समौसृत-ठाठ रच्यो सु धनेंद्र ॥
तहाँ वृषतत्त्व प्रकाशि अशेष,
कियो फिर निर्भय-थान प्रवेश ।
अनंत गुनातम श्रीसुख-राश,
तुम्हें नित भव्य नमैं शिव-आश ॥

घत्तानन्द

यह अरज हमारी, सुनि त्रिपुरारी,
जनम जरा मृत्यु दूर करो ।
शिव-संपति दीजे, ढील न कीजे,
निज लख लीजे कृपा धरो ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जो ऋषभेश्वर पूजं, मन-वच तन भाव शुद्ध कर प्रानी ।
सो पावें निश्चैसों, भुक्ती औ मुक्ति सार सुख-थानी ।।
(इत्याशीर्वादः । पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

श्रीचन्द्रप्रभजिन-पूजा

[कविवर वृन्दावनजी]

छप्पय

चारु चरन आचरन,
चरन चित-हरन चिहनचर ।
चंद चंद-तन चरित,
चंद-थल चहत चतुर नर ।।
चतुक चंड चकचूरि,
चारि चिद्चक्र गुनाकर ।
चंचल चलित सुरेश,
चूल-नुत चक्र धनुरहर ।।
चर-अचर-हितू तारन-तरन,
सुनत चहकि चिरनंद शुचि ।
जिन-चंद-चरन चरच्यो चहत,
चित-चकोर नचि रच्चि रुचि ।।

दोहा

धनुष डेढसौ तुंग तन, महासेन-नृप-नंद ।

मातु लक्ष्मना-उर जये, थापों चंद-जिनंद ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

गंगा-हृद-निरमल-नीर, हाटक-भृङ्ग भरा ।
तुम चरन जजों वरवीर, मेटो जनम-जरा ॥
श्रीचंदनाथ दुति चंद, चरनन चंद लगे ।
मन वच तन जजत अमंद आतम-जोति जगे ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्व०

श्रीखंड कपूर सुचंग, केशर-रंग भरी ।
घसि प्रासुक-जलके संग, भव आताप हरी ॥श्रीचंदनाथ०

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्व०

तंदुल सित सोम-समान, सम लय अनियारे ।
दिय पुंज मनोहर आन, तुम पदतर प्यारे ॥श्रीचंदनाथ०

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व०

सुर-द्रुमके सुमन सुरग, गंधित अलि आवै ।
तासों पद पूजत चंग, काम-विथा जावै ॥श्रीचंदनाथ०

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व०

नेवज नाना-परकार, इंद्रिय-बलकारी ।

सो लै पद पूजों सार, आकुलता हारी ।।श्रीचंदनाथ
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व०
तम-भंजन दीप सँवार, तुम ढिग धारतु हों ।
मम तिमिर-मोह निरवार, यह गुन धारतु हों ।।श्रीचंदनाथ।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्व०
दश गंध हुताशनमाहिं, हे प्रभु खेवतु हों ।
मम करम दुष्ट जरि जाँहि, यातें सेवतु हों ।।श्रीचंदनाथ०
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व०
अति उत्तम फल सुमंगाय, तुम गुन गावतु हों ।
पूजों तन मन हरषाय, विघन नशावतु हों ।।श्रीचंदनाथ०
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व०
सजि आठों दरब पुनीत, आठों अंग नमों ।
पूजों अष्टम जिन मीत, अष्टम अवनि गमों ।।श्रीचंदनाथ०
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व० स्वाहा

पंचकल्याणक

तोटक (वर्ण १२)

कलि पंचम चैत सुहात अली,
गरभागम-मंगल मोद भली
हरि हर्षित पूजत मातु पिता,

हम ध्यावत पावत शर्म सिता ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णपञ्चम्यां गर्भमङ्गलप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

कलि पौष इकादशि जन्म लयो,
तब लोकविषैं सुख-थोक भयो ।
सुर-ईश जजै गिर-शीश तबै,
हम पूजत हैं नुत शीश अबै ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राव अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

तप दुद्धर श्रीधर आप धरा,
कलि-पौष इकादसि पर्व वरा ।
निज-ध्यानविषै लवलीन भये,
धनि सो दिन पूजत विघ्न गये ॥

ॐ ह्रीं श्रीपौषकृष्णैकादश्यां निःक्रमणमहोत्सवमण्डिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

वर केवल-भानु उद्योत कियो,
तिहुँ लोकतणों भ्रम मेट दियो ।
कलि फाल्गुण-सप्तमि इन्द्र जजें,
हम पूजहिं सर्व कलंक भजे ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां केवलज्ञानमण्डिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सित फाल्गुण सप्तमि मुक्ति गये,

गुणवंत अनंत अबाध भये ।
हरि आय जजें तित मोद धरें,
हम पूजत ही सब पाप हरें ।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लसप्तम्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

हे मृगांक-अंकित-चरण, तुम गुण अगम अपार ।
गणधरसे नहि पार लहि, तौ को वरनत सार ।।१।।
पै तुम भगति हिये मम, प्रेरै अति उमगाय ।
तातैं गाउँ सुगुण तुम, तुम ही होउ सहाय ।।२।।

छन्द पद्धरी (१६ मात्रा)

जयचंद्र जिनेंद्र दया-निधान,
भव - कानन-हानन-दव-प्रमान ।
जय गरभ-जनम-मंगल दिनन्द,
भवि जीव-विकाशन शर्म-कंद ।।
दश लक्ष पूर्वकी आयु पाय,
मन-वांछित सुख भोगे जिनाय ।

लखि कारण ह्वै जगतैं उदास,
चिंत्यो अनुप्रेक्षा सुख-निवास ।।
तितलौकांतिक बोध्यो नियोग,
हरिशिविकासजिधरियो अभोग ।
तापै तुम चढ़ि जिनचंदराय,
ता छिनकी शोभा को कहाय ।।
जिन अंग सेत सित चमर ढार,
सितछत्र शीस गल-गुलकहार ।
सित रतन-जड़ित भूषण विचित्र,
सित चंद्र-चरण चरचैं पवित्र ।।
सित तन-द्युति नाकाधीश आप,
सित शिविकाकांधेधरि सुचाप ।
सित सुजस सुरेश नरेश सर्व,
सित चितमें चिंतत जात पर्व ।।
सित चंद-नगरतैं निकसि नाथ,
सित वनमें पहुँचे सकल साथ ।
सित शिला-शिरोमणिस्वच्छ छाँह,
सित तप तित धारो तुम जिनाह ।।
सित पयको पारण परम सार,
सित चंद्रदत्त दीनों उदार ।
सित करमें सो पय-धार देत,

मानो बांधत भव-सिंधु-सेत ।।
मानो सुपुण्य-धारा प्रतच्छ,
तित अचरजपन सुरकिय ततच्छ ।
फिरजायगहन सित तप करंत,
सितकेवल-ज्योति जग्यो अनंत ।।
लहि समवसरण-रचना महान,
जाके देखत सब पाप-हान ।
जहँ तरु अशोक शोभै उतंग,
सब शोकतनो चूरै प्रसंग ।।
सुर सुमन-वृष्टि नभतैं सुहात,
मनु मन्मथ तज हथियार जात ।
वानी जिन-मुखसौं खिरत सार,
मनु तत्त्व-प्रकाशन मुकर धार ।।
जहँ चौंसठ चमर अमर ढुरंत,
मनु सुजसमेघझरि लगिय तंत ।
सिंहासन है जहँ कमलजुक्त,
मनु शिव-सरवरको कमल शुक्त ।।
दुंदुभि जित बाजत मधुर सार,
मनु करम-जीतको है नगार ।
सिर छत्र फिरै त्रय श्वेत-वर्ण,
मनु रतन तीन त्रय-ताप-हर्ण ।।

तन-प्रभातनों मंडल सुहात,
भवि देखत निज-भव सात सात ।
मनुदर्पण-द्युतियह जगमगाय,
भवि-जनभव-मुख देखतसुआय ॥
इत्यादि विभूति अनेकजान,
बाहिज दीसत महिमा महान ।
ताको वरणत नहिं लहत पार,
तौ अंतरंग को कहै सार ॥
अनअंत गुणनि-जुत करि विहार,
धरमोपदेश दे भव्य तार ।
फिर जोग-निरोधि अघाति हान,
सम्मेदथकी लिय मुकति-थान ॥
वृन्दावन वंदत शीश नाय,
तुम जानत हो मम उर जु भाय ।
तातें का कहौं सु बार बार,
मन-वांछित कारज सार सार ॥

घत्ताछंद

जय चंद-जिनंदा आनंद-कंदा,
भव-भय-भंजन राजै है ।
रागादिक-द्वंदा हरि सब फंदा,
मुकतिमांहि थिति साजै है ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा

छंद चौबोला

आठौं दरब मिलाय गाय गुण,
जो भवि-जन जिन चंद जजैं।
ताके भव-भवके अघ भाजैं,
मुक्तिसार सुख ताहि सजैं ॥
जमके त्रास मिटैं सब ताके,
सकल अमंगल दूर भजैं।
वृन्दावन ऐसो लखि पूजत,
जातैं शिवपुरि राज रजैं ॥

(इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

श्री शांतिनाथ जिन-पूजा

[श्री बखतावरसिंह रतनलाल]

सर्वार्थ सुविमान त्याग गजपुर में आये।
विश्वसेन भूपाल तास के नन्द कहाये ॥
पंचम चक्री भये दर्प द्वादश में राजें।
मैं सेऊँ तुम चरण तिष्ठिये ज्यों दुख भाजें ॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

कोश मालती छन्द

पंचम उदधि तनो जल निरमल,
कंचन कलश भरे हर्षाय ।
धार देत ह्रीं श्रीजिन सन्मुख,
जन्म जरा - मृत दूर भगाय ।।
शान्तिनाथ पंचम चक्रेश्वर,
द्वादश मदनतनो पद पाय ।
तिनके चरण कमल के पूजे,
रोग शोक दुख दारिद जाय ।।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपा० ।

मलयागिर चंदन कदलीनंदन,
कुंकुम जल के संग घसाय ।
भव - आताप विनाशन कारण,
चरचूं चरण सबै सुखदाय ।।शां०।।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथ जिनेन्द्रायसंसार तापरोगविनाशनाय चन्दनं

पुण्य राशि सम उज्ज्वल अक्षत,
शशि मरीचि तिस देख लजाय ।
पुञ्ज किये तुम आगे श्रीजिन,
अक्षयपद के हेतु बनाय ।।शां०।।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् ।

सुर पुनीत अथवा अवनी के,
कुसुम मनोहर लिये मंगाय ।
भेंट धरत तुम चरणन के ढिग,
ततक्षिण कामवाण नश जाय ।।शां०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं

भांति भांति के सद्य मनोहर,
कीने मैं पकवान संवार ।
भर थारी तुम सन्मुख लायो,
क्षुधा वेदनी वेग निवार ।।शां०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय क्षुधावेदनीरोग विनाशनाय नैवेद्यं

घृत सनेह कर्पूर लाय कर,
दीपक ताके धरे प्रजार ।
जगमग जोत होत मन्दिर में,
मोह अंध को देत सुटार ।।शां०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं नि०

देवदारु कृष्णागरु चंदन,
तगर कपूर सुगंध अपार ।
खेऊँ अष्ट करम जारन को,
धूप धनंजय मांहि सुडार ।।शां०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपा०

नारंगी बादाम सुकेला,
एला दाडिम फल सहकार ।

कंचन थाल मांहि धर लायो,
अरचत ही पाऊँ शिवनार ॥शां०

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्व०

जल फलादि वसु द्रव्य संवारे,
अर्घ चढ़ाये मंगल गाय।
'बखत रतन' के तुम हो साहिब,
दीजे शिवपुर राज कराय ॥शां०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घ निर्व०

पंचकल्याणक

भादव सप्तमि श्यामा, सर्वार्थ त्याग नागपुर आये।
माता ऐरा नामा, मैं पूजूं अर्घ शुभ लाये॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय भाद्रपदकृष्णसप्तम्यां गर्भ-कल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्मे श्रीजिनराजा, जेठ असित चतुर्दशी सोहै।
हरिगण नावें माथा, मैं पूजूँ शान्ति चरण युग जो है॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय ज्येष्ठकृष्णचतुर्दशी जन्म-कल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

चौदश जेठ अंधेरी, कानन में जाय योग प्रभु लीन्हा।
नवनिधि रत्न सुछारी, मैं वंदूं आत्मसारजिन्ह चीना॥

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथजिनेन्द्राय ज्येष्ठ कृष्णचतुर्दश्यां तप-कल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पौष दशैं उजियारा, अरि घाति ज्ञान भानु जिन पाया।
प्रातिहार्य वसुधारा, मैं सेऊँ सुर नर जास यश गाया॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय पौषशुक्ल दशम्यां केवल-ज्ञानप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्मेद शैल भारी, हरि करि अघाति मोक्ष जिन पाई।
जेठ चतुर्दशि कारी, मैं पूजूं सिद्ध थान सुखदाई॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां मोक्ष-मंगलप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

भये आप जिन देव जगत में सुख विस्तारे,
तारे भव्य अनेक तिन्हों के संकट टारे।
टारे आठों कर्म मोक्ष सुख तिन को भारी,
भारी बिरद निहार लही मैं शरण तिहारी॥
चरणन को सिर नाय हूँ,
दुःख दरिद्र संताप हर।
हर सकल कर्म छिन एक में,
शांति जिनेश्वर शांति कर॥१॥

सारंग लक्षण चरन में,
उन्नत धनु चालीस।
हाटक वर्ण शरीर दुति,
नमूं शांति जग ईस ॥२॥

छन्द भुजंगप्रयात

प्रभो आपने सर्व के फंद तोड़े,
गिनाऊं कछु मैं तिनों नाम थोड़े।
पडो अम्बुधे बीच श्रीपाल राई,
जपो नाम तेरो भए थे सहाई॥
धरो राय ने सेठ को सूलिका पै,
जपो आपके नाम की सार जापै।
भये थे सहाई तबै देव आये,
करी फूल वर्षा स-विष्टर सुहाये॥
जबै लाख के धाम वन्हि प्रजारी,
भयो पांडवों पै महाकष्ट भारी।
जबै नाम तेरे तनी टेर कीनी,
करी थी विदुर ने वही राह दीनी॥
हरी द्रोपदी धातकी खंड मांहीं,
तुम्हीं थे सहाई भला और नाहीं।
लियो नाम तेरो भलो शील पालो,

बचाई तहां तैं सबै दुःख टालो ।।
जबै जानकी रामने थी निकारी,
धरे गर्भ को भार उद्यान डारी ।
रटो नाम तेरो सबै सौख्यदाई,
करी दूर पीड़ा सु छिन ना लगाई ।।
विसन सात सेवे करे तस्कराई,
अंजन जु तारो घड़ी ना लगाई ।
सहे अंजना चंदना दुःख जेते,
गये भाग सारे जरा नाम लेते ।।
घड़े बीच में सास ने नाग डारो,
भलो नाम तेरो जु सोमा संभारो ।
गई काढ़ने को भई फूल माला,
भई है विख्यातं सबै दुःख टाला ।।
इन्हें आदि देके कहाँलों बखानें,
सुना विरद भारी तिहुँलोक जानें ।
अजी नाथ मेरी जरा ओर हेरो,
बड़ी नाव तेरी रतो बोझ मेरो ।।
गहो हाथ स्वामी करो वेग पारा,
कहूं क्या अबै आपनी मैं पुकारा ।
सबै ज्ञान के बीच भासी तुम्हारे,
करो देर नाहीं अहो शांति प्यारे ।।

घत्तानंद

श्रीशांति तुम्हारो कीरति भारो,
सुर नर नारी गुणमाला ।
'बखतावर' ध्यावे 'रतन' सुगावे,
मम दुःख दारिद सब टाला ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथ जिनेन्द्राय गर्भ जन्म तप ज्ञान निर्वाण पचकल्याणक प्राप्ताय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

शिखरणी छंद

अजी ऐरानंदं छवि लखत हैं आय अरनं ।
धरैं लज्जा भारी करत थुति सो लाग चरनं ॥
करे सेवा सोई लहत सुख सो सार छिन में ।
घने दीना तारे हम चहत हैं वास तिन में ॥१३

इत्याशीर्वादः

श्री पार्श्वनाथ जिनपूजा

[कविवर बखतावरजी]

वर स्वर्ग प्राणतको विहाय सुमात वामा-सुत भये ।
अश्वसेन के पारस जिनेश्वर चरण तिनके सुर नये ॥
नौ हाथ उन्नत तन विराजे उरग-लक्षण अति लसैं ।
थापूं तुम्हें जिन आय तिष्ठो कर्म मेरे सब नसैं ॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर सवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

चामर छंद

क्षीर सोम के समान अंबु-सार लाइये,
हेम-पात्र धारके सु आपको चढ़ाइये।
पार्श्वनाथदेव सेव आपकी करूं सदा,
दीजिये निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणकप्राप्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदनादि केसरादि स्वच्छ गंध लीजिये।
आप चर्न चर्च मोह-तापको हनीजिये ॥पार्श्व०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय ! गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणकप्राप्ताय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

फेन चंदके समान अक्षतं मँगायके।
पादके समीप सार पूजको रचायके ॥पार्श्व०

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय ! गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणकप्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

केवड़ा गुलाब और केतकी चुनाइये।
धार चर्णके समीप काम को नशाइये ॥पार्श्व०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय ! गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणकप्राप्ताय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घेवरादि बावरादि मिष्ट सर्पिमें सनें।
आप चर्ण अर्चतें क्षुधादि-रोगको हनें ।।पार्श्व०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय ! गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणकप्राप्ताय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लाय रत्न-दीपको सनेह-पूरके भरूं।
बातिका कपूर वार मोह-ध्वांतको हरूं ।।पार्श्व०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय ! गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणकप्राप्ताय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप गंध लेयके सु अग्नि संग जारिये।
तास धूमके सु संग कर्म अष्ट वारिये ।।पार्श्व०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय ! गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणप्राप्ताय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

खारकादि चिर्भटादि रत्न-थारमें भरूं।
हर्ष धारके जजूं सुमोक्ष सौख्यको वरूं ।।पार्श्व०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय ! गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणकप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर गंध अक्षतं सुपुष्प चारु लीजिये।
दीप धूप श्रीफलादि अर्घतें जजीजिये ।।पार्श्व०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय ! गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक

शुभ प्राणत स्वर्ग विहाये, वामा माता उर आये।
वैशाखतनी दुति कारी, हम पूजें विघ्न-निवारी ।।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय ! वैशाखकृष्णद्वितीयायांगर्भ-कल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्मे त्रिभुवन-सुखदाता, कलिइकादशि पौष विख्याता।
स्यामा-तन अद्भुत राजे, रवि-कोटिक तेज सु लाजे ।।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय ! पौपकृष्णैकादश्यां जन्म-कल्याणकप्राप्ताय अर्घं निपर्वामीति स्वाहा।

कलि पौष इकादशि आई, तब बारह भावना भाई।
अपने कर लौंच सुकीना, हम पूजें चर्न जजीना ।।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पौषकृष्णैकादश्यां तपःकल्याणक-प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

वह कमठ जीव दुखकारी, उपसर्ग कियो अतिभारी।
प्रभु केवलज्ञान उपाया, अलि चैत चौथ दिन गाया ।।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय ! चैत्रकृष्णचतुर्थ्यां ज्ञान-कल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सित सावन सातैं आई, शिव-नार तबै जिन पाई।
सम्मेदाचल हरि माना, हम पूजें मोक्ष-कल्याना ।।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्ष-कल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

पारसनाथ जिनंदतने वच पौनभखी जरते सुन पाये,
करो सरधान लहो पद आन भये पद्मावति-शेष कहाये।
नाम प्रताप टरे संताप सुभव्यनको शिव-शर्म दिखाये,
हो अश्वसेन के नंद भले गुण गावत हैं तुमरे हरषाये ॥

दोहा

केकी-कंठ समान छवि, वपु उतंग नव हाथ।
लक्षण उरग निहार पग, बंदूं पारसनाथ ॥

मोतियादाम छंद

रची नगरी षट् मास अगार,
बने चहुँ गोपुर शोभ अपार।
सु कोटतनी रचना छवि देत,
कगूंरनपै लहकैं बहु केत ॥१॥
बनारस की रचना जु अपार,
करी बहु भांत धनेश तैयार।
तहाँ अश्वसेन नरेंद्र उदार,
करैं सुख वाम सु दे पटनार ॥
तजो तुम प्राणत नाम विमान,
भये तिनके घर नदन आन।
तबै पुर इन्द्र नियोगनि आय,
गिरींद्र करी विध न्होन सु जाय ॥

पिता घर सौंप गये निज धाम,
कुबेर करे वसु जाम जु काम ।
वढ़ें जिन दूज मयंक समान,
रमैं बहु वालक निर्जर आन ॥
भये जब अष्टम वर्ष कुमार,
धरे अणुव्रत महा सुखकार ।
पिता जब आन करी अरदास,
करो तुम व्याह वरो मम आस ॥
करो तब नाहिं रहे जगचंद,
किए तुम काम कषायजु मंद ।
चढ़े गजराज कुमारन संग,
सु देखत गंगतनी सुतरंग ॥
लख्यो इकरंक करे तप घोर,
चहूं दिस अग्नि बले अतिजोर ।
कही जिननाथ अरे सुन भ्रात,
करे बहु जीवतनी मत घात ॥
भयो तब कोप कहै कित जीव,
जले तब नाग दिखाय सजीव ।
लख्यो यह कारण भावन भाय,
नये दिव-ब्रह्म-ऋषी सब आय ॥
तबै सूर चार प्रकार नियोग,

धरी शिविका निज-कंध मनोग ।
करो वन मांहि निवास जिनंद,
धरे व्रत चारित आनंद-कंद ॥
गहे तहाँ अष्टम के उपवास,
गये धनदत्ततनें जु अवास ।
दियो पयदान महा सुखकार,
भई पण वृष्टि तहाँ तिह वार ॥
गये फिर काननमांहि दयाल,
धरो तुम योग सबै अघ टाल ।
तबै वह धूम सुकेत अयान,
भयो कमठाचर को सुर आन ॥
करै नभ गौन लखे तुम धीर,
जू पूरव वैर विचार गहीर ।
करो उपसर्ग भयानक घोर,
चली बहु तीक्ष्ण पवन झकोर ॥
रहो दशहूँ दिश में तम छाय,
लगी बहु अग्नि लखी नहिं जाय ।
सुरुंडन के बिन मुण्ड दिखाय,
पड़े जल मूसल धार अथाय ॥
तबै पद्मावति कंत धनंद,
नये युग आय तहाँ जिनचंद ।

भगौ तब रंक सु देखत हाल,
लहो तब केवल ज्ञान विशाल ॥
दियो उपदेश महाहितकार,
सु भव्यन बोधि सम्मेद पधार ।
सुवर्णहिभद्र जू कूट प्रसिद्ध,
वरी शिवनारि लही वसु ऋद्ध ॥
जजूं तुम चर्ण दोऊ कर जोर,
प्रभू लखिये अब ही मम ओर ।
कहै 'बखतावर रत्न' बनाय,
जिनेश हमें भव-पार लगाय ॥

घत्ता

जय पारस-देवं, सुर-कृत सेवं, वंदित चरण सुनागपती ।
करुणाके धारी, पर-उपकारी, शिव-सुखकारी कर्म हती ॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाण पंच-कल्याणकप्राप्ताय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जो पूजै मन लाय, भव्य पारस प्रभु नित ही ।
ताके दुख सब जाँय, भीति व्यापै नहिं कित ही ॥
सुख-सम्पति अधिकाय, पुत्र-मित्रादिक सारे ।
अनुक्रमसों शिव लहे, 'रतन' इम कहें पुकारे ॥

(इति आशीर्वादः । पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

श्रीवर्द्धमान जिन-पूजा

[कविवर वृन्दावनजी]

मत्तगयंद

श्रीमत वीर हरें भव-पीर, भरें सुख-सीर अनाकुलताई।
केहरि-अंक अरीकरदंक, नये हरि-पंकति-मौलि सुआई॥
मैं तुमको इत थापतु हौं प्रभु,
भक्ति - समेत हिये हरषाई।
हे करुणा - धन - धारक देव,
इहाँ अब तिष्ठहु शीघ्रहि आई॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

क्षीरोदधिसम शुचि नीर, कंचन-भृङ्ग भरों।
प्रभु वेग हरो भव-पीर, यातैं धार करों॥
श्रीवीर महा अतिवीर, सन्मति नायक हो।
जय वर्द्धमान गुण-धीर, सन्मति-दायक हो॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्व०

मलयागिर - चंदन सार, केशर - संग घसों।
प्रभु भव-आताप-निवार, पूजत हिय हुलसों॥श्रीवीर०

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्व०

तंदुल सित शशि-सम, शुद्ध, लीनो थार भरी ।
तसु पुञ्ज धरों अवरुद्ध, पावों शिव-नगरी ।।श्रीवीर०
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् निर्व०
सुरतरु के सुमन समेत, सुमन सुमन प्यारे ।
सो मनमथ-भंजन-हेत, पूजों पद थारे ।।श्रीवीर०
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व०
रस-रज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थार भरी ।
पद जज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख-अरी ।।श्रीवीर०
ॐ ह्रीं श्रीमहावीर जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नवेद्यं ।
तम-खंडित मंडित-नेह, दीपक जोवत हों ।
तुम पदतर हे सुख-गेह, भ्रम-तम खोवत हों ।।श्रीवीर०
ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं
हरिचन्दन अगर कपूर, चूर सुगन्ध करा ।
तुम पदतर खेवत भूरि, आठों कर्म जरा ।।श्रीवीर०
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्व०
ऋतु-फल कल-वर्जित लाय, कंचन थार भरा ।
शिव-फल-हित हे जिनराय, तुम ढिग भेट धरा ।।श्रीवीर०
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व०
जल-फल वसु सजि हिम-थार, तन-मन-मोद धरों ।
गुण गाऊं भव-दधि तार, पूजत पाप हरों ।।श्रीवीर०
ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व०

पंचकल्याणक

राग टप्पाचाल

मोहि राखो हो सरना,
श्रीवर्द्धमान जिनरायजी । मोहि०
गरभ साढ़ सित छट्ठ लियो थिति,
त्रिशला उर अघ-हरना ॥
सुर सुरपति तित सेव करो नित,
मैं पूजों भव-तरना । मोहि०

ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लषष्ठयां गर्भमंगलमंडिताय श्रीमहावीर-जिनेन्द्राय अर्घं निर्व० ।

जनम चैत सित तेरस के दिन,
कुंडलपुर कन-वरना ।
सुरगिरि सुरगुरु पूज रचायो,
मैं पूजों भव-हरना ॥ मोहि०

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीमहावीर-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपा० ।

मंगसिर असित मनोहर दशमी,
ता दिन तप आचरना ।
नृप-कुमार घर पारन कीनो,
मैं पूजों तुम चरना ॥ मोहि०

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीमहावीर-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपा० ।

शुकल दशैं वैशाख दिवस अरि,
घाति - चतुक छय करना ।
केवल लहि भवि भव-सर तारे,
जजों चरन सुख भरना ।। मोहि०

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीमहावीर-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपा० ।

कार्तिक श्याम अमावस शिव-तिय,
पावा पुरतें परना ।
गन-फनि-वृंद जजें तित बहुविधि,
मैं पूजों भय - हरना ।। मोहि०

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीमहावीर-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपा० ।

जयमाला

छन्द हरिगीता

गनधर असनिधर, चक्रधर,
हलधर गदाधर वरवदा ।
अरु चापधर विद्यासुधर,
तिरसूलधर सेवहिं सदा ।।
दुख - हरन आनंद - भरन तारन,
तरन चरन रसाल है ।

सुकुमाल गुन - मनिमाल उन्नत,
भालकी जयमाल है ॥१॥

घत्तानंद

जय त्रिशला-नंदन, हरिकृत-वंदन,
जगदानदन, चंदवरं ।
भव-ताप-निकंदन तन कन-मंदन,
रहित - सपंदन नयन - धरं ॥२॥

छन्द तोटक

जय केवल - भानु कला - सदनं,
भवि - कोक - विकाशन - कंज-वनं ।
जग - जीत - महारिपु - मोह - हरं,
रज ज्ञान - दृगांवर चूर - करं ॥
गर्भादिक - मंगल - मडित हो,
दुख - दारिद को नित खंडित हो ।
जगमांहि तुम्हीं सत - पंडित हो,
तुम ही भव - भाव - विहंडित हो ॥
हरिवंश - सरोजनको रवि हो,
बलवंत महंत तुम्हीं कवि हो ।
लहि केवल धर्म - प्रकाश कियो,
अबलों सोई मारग राजति यो ॥
पुनि आपतने गुनमांहि सही,

सुर मग्न रहैं जितने सब ही।
तिनको वनिता गुन गावत हैं,
लय माननि सों मन - भावत हैं॥
पुनि नाचत रंग उमंग भरी,
तुम भक्तिविषैं पग येम धरी।
झननं झननं झननं झननं,
सुर लेत तहाँ तननं तननं॥
घननं घननं घन घंट बजै,
दृमदृं दृमदृं मिरदंग सजै।
गगनांगन - गर्भगता सुगता,
ततता ततता अतता वितता॥
धृगतां धृगतां गति बाजत है,
सुरताल रसाल जु छाजत है।
सननं सननं सननं नभ में,
इक रूप अनेक जु धारि भमें॥
कइ नारि सुवीन बजावति हैं,
तुमरो जस उज्जल गावति हैं।
कर - तालविषै करताल धरें,
सुर ताल विशाल जु नाद करें॥
इन आदि अनेक उछाह भरी,
सुर भक्ति करें प्रभुजी तुमरी।

तुम ही जग-जीवनि के पितु हो,
तुमही बिन कारनतें हितु हो ॥
तुमही सब विघ्न - विनाशन हो,
तुमही निज आनंद - भासन हो।
तुमही चित - चिंतित - दायक हो,
जगमाहिं तुम्हों सब लायक हो ॥
तुमरे पन मंगलमाँहिं सही,
जिय उत्तम पुन्न लियो सब ही।
हमको तुमरी सरनागत है,
तुमरे गुन में मन पागत है ॥
प्रभु मो हिय आप सदा बसिये,
जब लों वसु कर्म नहीं नसिये।
तब लों तुम ध्यान हिये बरतो,
तब लों श्रुत चिंतन चित्त रतो ॥
तब लों व्रत चारित्र चाहतु हों,
तब लों शुभ भाव सु गाहतु हों।
तब लों सत - संगति नित्त रहो,
तब लों मम संजम चित्त गहो ॥
जब लों नहिं नाश करो अरि को,
शिव-नारि बरों समता धरि को।
यह द्यो तब लों हमको जिनजी,

हम जाचतु हैं इतनी सुन जी ॥

घत्तानंद

श्रीवीर - जिनेशा नमित - सुरेशा,
नाग - नरेशा भगति भरा ।
'वृन्दावन' ध्यावैं विघन नशावैं,
वांछित पावैं शर्म - वरा ॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीसन्मति के जुगल पद, जो पूजैं धरि प्रीति ।
'वृन्दावन' सो चतुर नर, लहै मुक्ति-नवनीत ॥

(इत्याशीर्वादः । पुष्पाञ्जलि क्षिपामि)

श्री गोम्मटेश्वर पूजा

मत्तगयंद छंद

स्थापना

देखत ही द्युतिवन्त हरे, तनकी छवि, सुधाधर हारे ।
ध्यान विवेक तपोबल से, जिनने अरि-कर्म प्रचंड संहारे ॥
बाहु पसार अनुग्रह की, भवसागर से भवि जीव उबारे ।
सो जिन बाहुबलीश, दयाकर तिष्ठहु मानस आय हमारे ।

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिभगवन् अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिभगवन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिभगवन् मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

हरिगीतिका छंद

शुचि सित सलिल की धार, शशि रस तुल्य गुण की खान है।
सो चरण सन्मुख ईश के, भवसिंधु-सेतु समान है॥
वसुकर्मजेता मोक्षनेता, मदनतन अभिराम है।
भगवान बाहुबलीश को, नित शीशनाय प्रणाम है॥

ॐ ह्रीं भगवते श्रीबाहुबलिजिनाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशर कपूर सुगन्धयुत श्रीखण्ड संग घसाइये।
भवतापभंजन देव पद की भव्य पूज रचाइये॥वसुकर्म०॥

ॐ ह्रीं भगवते श्रीबाहुबलिजिनाय संसारतापविनाशनाय चंदन निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत अखंड सुधांशुकरसम धवल शुद्ध चुनायके।
अक्षय महापद हेतु चरचूं चरण नित गुण गायके॥वसुकर्म०॥

ॐ ह्रीं भगवते श्रीबाहुबलिजिनाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

अम्भोज चंपक मालती बेला गुलाब प्रसून ले।
पदपद्म पूजूं देवके, हैं मदन मद जिनने दले॥वसुकर्म०॥

ॐ ह्रीं भगवते श्रीबाहुबलिजिनाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिमिष्ट मोहन भोग मोदक घेवरादिक घृतमने।
पकवान से भगवान को पूजूं क्षुधादिक जिन हने॥वसुकर्म०॥

ॐ ह्रीं भगवते श्रीबाहुबलिजिनाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लेकर जजूं कपूर घृत रत्नादिकी दीपावली।
जिनकी प्रभा से हो प्रगट गुणराशि आतमकी भली ।।वसुकर्म०
ॐ ह्रीं भगवते श्री बाहुबलिजिनाय मोहान्धकारविनाशनाय
दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरदारु अगर कपूर तगर सुगन्ध चंदन से बनी।
दशदिशारंजन धूप दशविधि अग्र खेऊं पावनी ।।वसुकर्म०।
ॐ ह्रीं भगवते श्री बाहुबलिजिनाय दुष्टाष्टकर्मदहनाय धूपं
निर्वपामीति स्वाहा।

बादाम पिस्ता नारियल अंगूर कदली आम हैं।
शिव अमरफल हित चर्चते हम नाथ तव पदधाम हैं ।।वसुकर्म०।
ॐ ह्रीं भगवते श्रीबाहुबलिजिनाय मोक्षफलप्राप्तये फलं
निर्वपामीति स्वाहा।

गन्धाम्बु तन्दुल सुमन व्यंजन दीप धूप सुहावनी।
फल मधुर मिश्रित अर्घ ले, पूजूं तुम्हें त्रिभुवन धनी ।।वसुकर्म०।
ॐ ह्रीं भगवते श्री बाहुबलिजिनाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

पोदनपुर में स्वर्ण की, जजूं बिंब छविधाम।
पुष्प वृष्टि सुर जहं करें, केशरकी अविराम ।।

ॐ ह्रीं श्रीपोदनपुरस्थबाहुबलिस्वामिप्रतिमायै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

भला विंध्यगिरि शिखर है, भले विराजे जेह।
चालिस हस्त सुशोभनो, खड्गासन है देह ।।
अनुपम छवि जिनराज की, देख लजे शशि सूर्य,

तातैं नहिं छाया पड़े, बन्दूं यह माधुर्य ॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रवणबेलगोला—विंध्यगिरिस्थ बाहुबलिजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

गोम्मटगिरि वेणूर में, जजूं नाय कर शीश।
पूंजूं आरा कारकल, और जहां हों ईश ॥

ॐ ह्रीं श्रीगोम्मटगिरि वेणुपुर, धनुपुरा (आरा) कारकल आदिविविधस्थानस्थ श्रीबाहुबलिजिनप्रतिमायै अर्घ निर्वपामि।

नमूं शिखर कैलाश जिहिं, शेष कर्म करि शेप।
लोक शिखर चूड़ामणी, भए सिद्ध परमेश ॥

ॐ ह्रीं श्रीकैलाशशिखरात् सिद्धिगताय श्रीबाहुबलिसिद्धाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

सवा पांचसौ धनुप तन, लतायुक्त अभिराम।
खड्गासन मरकत वरण, सुन्दर रूप ललाम ॥

पद्धरी

जय वाहुवलीश्वर सुगुण धाम, चरणों में हों कोटिक प्रणाम।
तुम आदि ब्रह्म के सुत सुजान, था अंतरंग में स्वाभिमान ॥
प्रण था वृषभेश्वरके सिवाय, यह मस्तक परको ना झुकाय।
षट्-खण्ड भूमि भरतेश जीत, लौटे जब अवधपुरी पुनीत ॥
नहिं करै चक्र तब पुर प्रवेश, भरतेश्वर की जय थी अशेष।

तुम पोदनेश बाहूबलीश, नहिं थे वश में नहिं नमो शीश ।।
इस पर ही युद्ध ठना महान, थीं खड़ी सैन्य चतुरंग आन।
हैं भरत बाहु द्वय चरम अंग, इनका नहिं होगा अंग भंग ।।
बहु सेना का होगा संहार, कर उभयपक्ष मन्त्री विचार।
ठहराए निर्णय हित प्रबुद्ध, थिर-दृष्टि मल्ल जल तीन युद्ध ।।
तीनों जीते तुम हे बलीश, तव क्रोधित हो वह चक्र ईश।
निज चक्र दिया तुम पर चलाय, कुल रीति नीति सबको भुलाय ।।
पर चक्ररत्न तुम पास आय, फिरि गया सप्रदिक्षण शीश नाय।
यह ज्येष्ठ भ्रात की क्रिया देख, इस जग की स्वार्थकता विलेख ।।
तुम देव भये जग से उदास, सब शिथिल किया भवमोह पास।
दे तनुज महाबल को स्वराज, सब सौंप उसे वैभव समाज ।।
कह भरतेश्वर से बनो ज्येष्ठ, इस नश्वर भू के भूप श्रेष्ठ।
फिर यथाजात मुद्रा सु धार, कर किया कर्मरिपु का संहार ।।
इक वर्ष खड़े थे एक थान, धर प्रतिमायोग अखण्ड ध्यान।
थे एक वर्ष तक निराहार, सर्वोत्कृष्ट तप महा धार ।।
बाईस परीषह सहे धीर, तपते थे तप जिन अति गहीर।
थे उगे लता तरु आस पास, चरनन में था अहि का निवास ।।
थे तजे उग्र तप के प्रभाव, वन के सब जीव विरोध भाव।
अनुताप तुम्हें इक था महेश, पाए हैं मुझसे भरत क्लेश ।।
भरतेश्वर से सन्मान पाय, सन्ताप गया सत्वर नशाय।
तब भए केवली हे जिनेश, पूजन की आकर नर सुरेश।
उपदेश दिया करुणा-अधार, भवि जीवों को करके विहार।
कैलाश शिखर से मुक्ति थान, पाया तुमने सब कर्म हान ।।
जय गोमटेश बाहुबलीश, जय जय भुजबलि जय दोर्बलीश।

जय त्रिभुवन मोहन छवि अनूप, जय धर्मप्रकाशक ज्योतिरूप ॥
जय मुनिजन भूषण धर्मसार, अकलंकरूप मोहि करहु पार।
जय मात सुनन्दा के सुनन्द, शिव राज्य देहु मोहि जगतवंद ॥
है स्वर्णमयी प्रतिमाभिराम, पोदनपुर में शतशः प्रणाम।
धनु सवापांचसौ हो जिनेन्द्र, जजते कुसुमांजलि ले सुरेन्द्र ॥
प्रतिमा विंध्येश्वरकी प्रधान, नित नमूं कारकल की महान।
वेणूर पुरीकी है ललाम, गोमटनिरिपति को हो प्रणाम ॥
आरा मे रहे विराज नाथ, शतबार तुम्हें हम नमत माथ।
जितनी हों जहं अहं बिम्वसार, सबको मेरा हो नमस्कार ॥

धत्ता

जय बाहुबलीश्वर महाॠपीश्वर, दयानिधीश्वर जगतारी।
जय जय मदनेश्वर जितचक्रेश्वर, विंध्येश्वर भवभयहारी ॥

महार्घं

वाहुबली के महापादपद्मों को, जो भवि नित्य जजें,
सर्वसंपदा पावे जग में, ताके सब संताप भजें।
होकर 'वीर' वाहुवलि जैसा, 'धर्म' चक्र का कंत सजै,
कर्मबेड़ियां काट स्वपर को, निश्चय शिवपुरराज रजै ॥

[इत्याशीर्वाद]

सरस्वती पूजा

जनम जरा मृत्यु छय करै, हरै कुनय जड़रीति।
भवसागर सों ले तिरै, पूजें जिन वच प्रीति ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीवाग्वादिनि ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीवाग्वादिनि ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वनीवाग्वादिनि ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं

अथाष्टक सोरठा

छीरोदधिगंगा, विमल तरंगा, सलिल अभंगा सुखसंगा।
भरि कंचन झारी, धार निकारी, तृषा निवारी, हित चंगा ।।
तीर्थंकरकी धुनि, गणधर ने सुनि, अंग रचे चुनि, ज्ञानमई ।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी, पूज्य भई ।।१

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

करपूर मंगाया, चंदन आया, केशर लाया, रंग भरी ।
शारदपद बंदों, मन अभिनंदों, पाप निकंदों, दाह हरी ।।तीर्थ०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुखदास कमोदं, धारकमोदं, अति अनुमोदं, चन्दसमं ।
वहु भक्ति वढ़ाई, कीरति गाई, होहु सहाई, मात ममं ।।तीर्थ०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

बहु फूल सुवासं, विमल प्रकासं, आनन्द रासं, लाय धरे ।
मम काम मिटायो, शील वढ़ायो, सुख उपजायो, दोष हरे।।तीर्थ०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वनीदेव्यै पुष्पं निर्वपामीनि स्वाहा ।

पकवान वनाया, वहु घृत लाया, सव विधि भाया मिष्ठ महा ।
पूजूं थुति गाऊँ, प्रीति वढ़ाऊँ, क्षुधा नशाऊँ, हर्ष लहा ।।तीर्थ०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नैवेद्यम् निर्वपामीनि स्वाहा ।

करि दीपक-जोतं, तमछय होतं, ज्योति उदोतं तुमहिं चढ़ै ।
तुम हो परकाशक, भरमविनाशक, हम घट-भासक, ज्ञान वढ़ै ।।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभगंध दशोंकर, पावकमें धर, धूप मनोहर खेवत हैं।
सब पाप जलावें, पुण्य कमावें, दास कहावें, सेवत हैं ।।तीर्थं०
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
बादाम छुहारी, लौंग सुपारी, श्रीफल भारी, ल्यावत हैं।
मनवांछित दाता, मेट असाता, तुम गुन माता, ध्यावत हैं ।।तीर्थं०
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं निर्वपामीति स्वाहा।
नयननसुखकारी, मृदुगुनधारी, उज्ज्वलभारी, मोलधरें।
शुभगंधसम्हारा, वसन निहारा, तुम तन धारा, ज्ञान करें ।।तीर्थं०
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै वस्त्रं निर्वपामीति स्वाहा।
जलचंदन अच्छत, फूल चरू चत, दीप धूप अति फल लावें।
पूजा को ठानत, जो तुम जानत, सो नर द्यानत, सुख पावें ।।तीर्थं०
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ जयमाला (सोरठा)

ओंकार धुनिसार, द्वादशांगवाणी विमल।
नमों भक्ति उर धार, ज्ञान करै जड़ता हरै।।

छन्द बेसरी

पहलो आचारांग बखानो, पद अष्टादश सहस प्रमानो।
दूजो सूत्रकृतं अभिलापं, पद छत्तीस सहस गुरु भाषं ।।१।।
तीजो ठाना अंग सुजानं, सहस बियालिस पद सरधानं।
चौथो समवायांग निहारं, चौसठ सहस लाख इक धारं ।।२।।
पंचम व्याख्याप्रज्ञपतिदरसं, दोय लाख अट्ठाइस सहसं।
छट्ठो ज्ञातृकथा विसतारं, पांच लाख छप्पन हज्जारं ।।३।।
सप्तम उपासकाध्ययनंगं, सत्तर सहस ग्यार लख भंगं।
अष्टम अंतकृतं दश ईसं, सहस अठाइस लाख तेईसं ।।४।।

नवम अनुत्तर दश सुविशालं, लाख बनावै सहस चवालं।
दशम प्रश्न व्याकरण विचारं, लाखतिरानव सोल हजारं ।।५।।
ग्यारम सूत्र विपाक सुभाखं, एक कोड चौरासी लाखं।
चार कोडि अरु पंद्रह लाखं, दो हजार सब पद गुरु शाखं ।।६।।
द्वादश दृष्टिवाद पनभेदं, इक सौ आठ कोडि पन वेदं।
अडसठ लाख सहस छप्पन हैं, सहित पंचपद मिथ्या हन हैं ।।७।।
इक सौ बारह कोडि बखानो, लाख तिरासी ऊपर जानो।
ठावन सहस पंच अधिकाने, द्वादश अंग सर्वपद माने ।।८।।
कोडि इकावन आठहि लाखं, सहस चुरासी छहसौ भाखं।
साढ़े इकीस सिलोक बताये, एक एक पद के ये गाये ।।९।।

घत्ता

जा बानी के ज्ञान में, सूझे लोक अलोक।
'द्यानत' जग जयवंत हो, सदा देत हों धोक।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

[इत्याशीर्वाद]

सोलहकारणपूजा

[कविवर द्यानतरायजी]

सोलह कारण भाय तीर्थंकर जे भये।
हरषे इन्द्र अपार मेरुपै ले गये।।
पूजा करि निज धन्य लख्यो बहु चावसों।
हमहू षोडश कारन भावैं भावसों।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: ।
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट् ।

कंचन-झारी निरमल नीर पूजों जिनवर गुन-गंभीर ।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।
दरशविशुद्धि भावना भाय सोलह तीर्थंकर-पद-दाय ।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि - विनय सम्पन्नता - शीलव्रतेष्वनतिचाराभीक्ष्णज्ञानोपयोग-संवेग - शक्तितस्त्याग-तपसी-साधुसमाधि - वैयावृत्यकरणार्हद्भक्ति-आचार्यभक्ति - बहुश्रुतभक्ति - प्रवचनभक्ति - आवश्यकापरिहाणि - मार्ग-प्रभावना - प्रवचनवात्सल्येतितीर्थंकरत्वकारणेभ्योजन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चंदन घसौं कपूर मिलाय पूजौं श्री जिनवर के पाय ।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।दरश०।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं

तंदुल धवल सुगंध अनूप पूजौं जिनवर तिहुं जग-भूप ।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।दरश०।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्

फूल सुगंध मधुप-गुंजार पूजौं जिनवर जग-आधार ।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।दरश०।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं

सद नेवज बहुविधि पकवान पूजौं श्रीजिनवर गुणखान ।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।दरश०।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नै०

दीपक-ज्योति तिमिर छयकार पूजूं श्रीजिन केवलधार ।

परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।दरश०।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपा० ।

अगर कपूर गंध शुभ खेय श्रीजिनवर आगे महकेय।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।दरश०।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व०

श्रीफल आदि वहुत फलसार पूजों जिन वांछित दातार।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।
दरशविशुद्धि भावना भाय सोलह तीर्थंकर-पद-दाय।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं

जल फल आठों दरब चढ़ाय 'द्यानत' वरत करों मनलाय।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।दरश०।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्व०

षोडश कारण गुण करै, हरै चतुरगति-वास।
पाप पुण्य सव नाश के, ज्ञान-भान परकाश ।।

चौपाई १६ मात्रा

दरशविशुद्धि धरे जो कोई, ताको आवागमन न होई।
विनय महाधारै जो प्राणी, शिव-वनिता की सखी वखानी ।।
शील सदा दिढ जो नर पालै, सो औरन की आपद टालै।
ज्ञानाभ्यास करै मनमाहीं, ताके मोह-महातम नाहीं ।।
जो संवेग-भाव विसतारै, सुरग-मुकति-पद आप निहारै।
दान देय मन हरप विशेखै, इह भव जस परभव सुख देखै ।।
जो तप तपै खपे अभिलाषा, चूरे करम-शिखर गुरु भाषा।

साधु-समाधि सदा मन लावै, तिहुं जग भोग भोगि शिव जावै।।
निश-दिन वैयावृत्य करैया, सो निहचै भव-नीर तिरैया।
जो अरहंत-भगति मन आनै, सो जन विषय कषाय न जानै।।
जो आचारज-भगति करै है, सो निर्मल आचार धरै है।
बहुश्रुतवंत-भगति जो करई, सो नर संपूरन श्रुत धरई।।
प्रवचन-भगति करै जो ज्ञाता, लहै ज्ञान परमानंद-दाता।
षट् आवश्यक काल जो साधै, सो ही रत्न-त्रय आराधै।।
धरम-प्रभाव करैं जे ज्ञानी, तिन शिव-मारग रीति पिछानी।
वत्सल अंग सदा जो ध्यावै, सो तीर्थंकर पदवी पावै।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामी०

दोहा

एही सोलह भावना, सहित धरै व्रत जोय।
देव-इन्द्र-नर-वंद्य-पद, 'द्यानत' शिव-पद होय।।

[इत्याशीर्वाद]

पंचमेरु पूजा

[कविवर द्यानतरायजी]

गीता छन्द

तीर्थंकरों के न्हवन-जलतैं भये तीरथ शर्मदा,
तातैं प्रदच्छन देत सुर-गन पंच मेरुनकी सदा।
दो जलधि ढाई द्वीप में सब गनत-मूल विराजहीं,
पूजौं असी जिनधाम-प्रतिमा होहि सुख दुख भाजहीं।।

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्रावतरावतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

चौपाई आंचलीबद्ध

सीतल-मिष्ट-सुवास मिलाय, जलसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
पांचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमा को करों प्रनाम ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन - विजय-अचल-मन्दिर - विद्युन्मालिपंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल केशर करपूर मिलाय गंधसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥पाँचों०॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो चन्दनं

अमल अखंड सुगंध सुहाय, अच्छत सौं पूजौं जिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥पाँचों०॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अक्षतान्

बरन अनेक रहे महकाय, फूल सों पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥पाँचों०॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो पुष्पं निर्व०

मन-वांछित बहु तुरत बनाय, चरुसों पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥पाँचों०॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं निर्व०

तम-हर उज्ज्वल ज्योति जगाय, दीपसों पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
पाँचों मेरु असी जिन धाम, सब प्रतिमा को करो प्रनाम।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो दीपं निर्व०
खेऊँ अगर अमल अधिकाय, धूपसों पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो धूपं निर्व०
सुरस सुवर्ण सुगंध सुभाय, फलसों पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥पाँचों०॥
ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो फलं निर्व०
आठ दरबमय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥पाँचों०॥
ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अर्घं निर्व०

जयमाला

प्रथम सुदर्शन-स्वामि, विजय अचल मंदर कहा।
विद्युन्माली नाम, पंच मेरु जग में प्रगट ॥१॥

बेसरी छन्द

प्रथम सुदर्शन मेरु विराजै, भद्रशाल वन भूपर छाजै।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी ॥२॥
ऊपर पंच-शतकपर सोहै, नंदन-वन देखत मन मोहै।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी ॥३॥

साढ़े वासठ सहस ऊँचाई, वन सुमनस शोभै अधिकाई।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी ॥४॥
ऊँचा जोजन सहस छत्तीसं, पांडुकवन सोहै गिरि सीसं।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी ॥५॥
चारों मेरु समान बखाने, भूपर भद्रसाल चहुँ जाने।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी ॥६॥
ऊँचे पांच शतक पर भाखे, चारों नन्दनवन अभिलाखे।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी ॥७॥
साढ़े पचपन सहस उतंगा, वन सौमनस चार बहुरंगा।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी ॥८॥
उच्च अठाइस सहस बताये, पांडुक चारों वन शुभ गाये।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी ॥९॥
सुर नर चारन बंदन आवें, सो शोभा हम किह मुख गावें।
चैत्यालय अस्सी सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी ॥१०॥

दोहा

पंचमेरु की आरती, पढ़ै सुनै जो कोय।
'द्यानत' फल जानें प्रभू, तुरत महासुख होय ॥११॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अर्घं निर्व०

[इत्याशीर्वाद]

नन्दीश्वरद्वीप-पूजा

[कविवर द्यानतरायजी]

सरब पर्व में बड़ो अठाई परब है।
नंदीश्वर सुर जांहि लेय वसु दरब है ॥

हमें सकति सो नाहिं इहां करि थापना ।
पूजें जिनगृह-प्रतिमा है हित आपना ।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ: तिष्ठ: ठ: ठ: ।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

कंचन-मणि-मय-भृङ्गार, तीरथ-नीर भरा ।
तिहुं धार दई निरवार, जामन मरन जरा ।।
नंदीश्वर-श्रीजिन-धाम, बावन पुंज करों ।
वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंद-भाव धरों ।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिक्षु द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्व०

भव-तप-हर शीतल वास, सो चंदन नाहीं ।
प्रभु यह गुन कीजै सांच आयो तुम ठांही ।।नंदी०

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपा०

उत्तम अक्षत जिनराज, पुञ्ज धरे सोहै ।
सब जीते अक्ष-समाज, तुमसम अरु को है ।।नंदी०

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

तुम काम विनाशक देव, ध्याऊं फूलनसों ।
लहुँ शील-लच्छमी एव, छूटों सूलनसों ।।नंदी०

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नेवज इंद्रिय-बलकार, सो तुमने चूरा ।
चरु तुम ढिग सोहै सार, अचरज है पूरा ।।नंदी०

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपक की ज्योति-प्रकाश, तुम तन मांहि लसै ।
टूटै करमन की राश, ज्ञान-कणी दरसै ।।नंदी०

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोहान्ध-कारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कृष्णागरु-धूप-सुवास, दश-दिशि नारि वरै ।
अति हरप-भाव परकाश, मानों नृत्य करै ।।नंदी०

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

बहुविधि फल ले तिहुँ काल, आनंद राचत हैं ।
तुम शिव-फल देहु दयाल, तुहि हम जाचत हैं ।।नंदी०

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

यह अरघ कियो निज-हेत, तुमको अरपतु हों ।
'द्यानत' कीज्यो शिव-खेत, भूमि समरपतु हों ।।नंदी०

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अनर्घपद-प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

कार्तिक फागुन साढके, अंत आठ दिन मांहि ।
नंदीश्वर सुर जात हैं, हम पूजें इह ठांहि ।।१।।

एकसौ त्रेसठं कोडि, जोजन महा ।
लाख चौरासिया एक दिश में लहा ॥
आठमों दीप नंदीश्वरं भास्वरं ।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं ॥२॥
चार दिशि चार अंजनगिरी राजहीं ।
सहस चौरासिया एक दिश छाजहीं ॥
ढोलसम गोल ऊपर तले सुंदरं ॥भौन० ॥३॥
एक इक चार दिशि चार शुभ बावरी ।
एक इक लाख जोजन अमल-जल भरी ॥
चहुँ दिसा चार बन लाख जोजन वरं ।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं ॥४॥
सोल वापीन मधि सोल गिरि दधिमुखं ।
सहस दश महा जोजन लखत ही सुखं ॥
बावरी कौन दो माहि दो रति करं ॥भौन० ॥५॥
शैल बत्तीस इक सहस जोजन कहे ।
चार सोलै मिलैं सर्व बावन लहे ॥
एक इक सीस पर एक जिनमंदिरं ॥भौन० ॥६॥
बिंब अठ एकसौ रतनमयि सोहहीं ।
देव देवी सरव नयन मन मोहहीं ॥
पांचसै धनुष तन पद्म-आसन परं ॥भौन० ॥७॥
लाल नख-मुख नयन स्याम अरु स्वेत हैं ।
स्याम-रंग भौंह सिर-केशछवि देत हैं ॥
वचन बोलत मनों हँसत कालुष हरं ॥भौन० ॥८॥

कोटि-शशि-भान-दुति-तेज छिप जात है।
महा-वैराग-परिणाम ठहरात है ।।
वयन नहिं कहैं लखि होत सम्यक्धरं ।।भौन० ।।६।।

सोरठा

नंदीश्वर-जिन-धाम, प्रतिमा-महिमा को कहै ।
'द्यानत' लीनो नाम, यही भगति शिव-सुख करै ।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिक्षु द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

[इत्याशीर्वादः । पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि]

दशलक्षणधर्म-पूजा

[कविवर द्यानतरायजी]

अडिल्ल

उत्तम छिमा मारदव आरजव भाव हैं,
सत्य सौच संयम तप त्याग उपाव हैं ।
आकिंचन ब्रह्मचरज धरम दश सार हैं,
चहुंगति-दुखतैं काढ़ि मुकति करतार हैं ।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अवतर् अवतर् संवौषट् ।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

सोरठा

हेमाचलकी धार, मुनि-चित सम शीतल सुरभि ।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसंयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्येति दशलक्षणधर्माय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल अखंडित सार, तंदुल चन्द्र समान शुभ।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

फूल अनेक प्रकार, महकें ऊरध-लोकलों।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज विविध निहार, उत्तम षट-रस-संजुगत।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाति कपूर सुधार, दीपक-जोति सुहावनी।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर धूप विस्तार, फैले सर्व सुगंधता।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फलकी जाति अपार, घ्रान-नयन-मन मोहने।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों दरब संवार, 'द्यानत' अधिक उछाहसों ।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अंगपूजा

सोरठा

पीडैं दुष्ट अनेक, बाँध मार बहुविधि करैं ।
धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजै पीतमा ।।
उत्तम छिमा गहो रे भाई, इह भव जस पर-भव सुखदाई ।
गाली सुनि मन खेद न आनो, गुनको औगुन कहै अयानो ।।
कहि है अयानो वस्तु छीनै, बाँध मार बहुविधि करै ।
घरतैं निकारै तन विदारै, बैर जो न तहाँ धरै ।।
तैं करम पूरब किये खोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा ।
अति क्रोध-अगनि बुझाय प्रानी, साम्य जल ले सीयरा ।।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
मान महाविषरूप, करहि नीच-गति जगत में ।
कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्रानी सदा ।।
उत्तम मार्दव-गुन मन माना, मान करनको कौन ठिकाना ।
वस्यो निगोद माहितैं आया, दमरी रूकन भाग बिकाया ।।
रूकन बिकाया भाग-वशतैं, देव इकइंद्री भया ।
उत्तम मुआ चांडाल हूवा, भूप कीड़ों में गया ।।
जीतव्य जोवन धन गुमान, कहा करै जल-बुदबुदा ।
करि विनय बहु-गुन बड़े जनकी, ज्ञानका पावै उदा ।।
ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्माङ्गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

कपट न कीजै कोय, चोरनके पुर ना बसै।
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु संपदा॥
उत्तम आर्जव-रीति बखानी, रंचक दगा बहुत दुखदानी।
मनमें हो सो वचन उचरिये, वचन होय सो तनसौं करिये॥
करिये सरल तिहुँ जोग अपने, देख निरमल आरसी।
मुख करै जैसा लखै तैसा, कपट-प्रीति अंगारसी॥
नहिं लहै लछमी अधिक छल करि, करम-बंध-विशेषता।
भय त्यागि दूध विलाव पीवै, आपदा नहिं देखता॥
ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
कठिन वचन मति बोल, पर-निंदा अरु झूठ तज।
सांच जवाहर खोल, सतवादी जगमें सुखी॥
उत्तम सत्य-वरत पालीजै, पर-विश्वासघात नहिं कीजै।
साँचे झूठे मानुष देखो, आपन पूत स्वपास न पेखो॥
पेखो तिहायत पुरुष साँचे को दरव सब दीजिये।
मुनिराज-श्रावक की प्रतिष्ठा साँच गुण लख लीजिये॥
ऊँचे सिंहासन बैठि वसु नृप, धरम का भूपति भया।
वच झूठसेती नरक पहुँचा, सुरग में नारद गया॥
ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्माङ्गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
धरि हिरदै संतोष, करहु तपस्या देहमां।
शौच सदा निरदोष, धरम वड़ो संसार में॥
उत्तम शौच सर्व जग जाना, लोभ पाप को बाप बखाना।
आशा-पास महा दुखदानी, सुख पावै संतोषी प्रानी॥
प्रानी सदा शुचि शील जप तप, ज्ञान ध्यान प्रभावनैं।
नित गंग जमुन समुद्र न्हाये, अशुचि-दोष सुभावनैं॥

ऊपर अमल मल भरयो भीतर, कौन विधि घट शुचि कहै।
बहु देह मैली सुगुन-थैली, शौच-गुन साधू लहै॥
ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्माङ्गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

काय छहों प्रतिपाल, पंचेंद्री मन वश करो।
संजम-रतन संभाल, विषय चोर बहु फिरत हैं॥

उत्तम संजम गहु मन मेरे, भव-भवके भाजें अघ तेरे।
सुरग-नरक-पशुगति में नाहीं, आलस-हरन करन सुख ठाहीं॥
ठाहीं पृथी जल आग मारुत, रूख त्रस करुना धरो।
सपरसन रसना घ्रान नैना, कान मन सब वश करो॥
जिस बिना नहिं जिनराज सीझे, तू रुल्यो जग-कीच में।
इक घरी मत विसरो करो नित, आव जम-मुख बीच में॥
ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्माङ्गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

तप चाहै सुरराय, करम-सिखर को वज्र है।
द्वादशविधि सुखदाय, क्यों न करै निज सकति सम॥

उत्तम तप सब माहिं बखाना, करम-शैल को वज्र-समाना।
बस्यो अनादि-निगोद-मँझारा, भू-विकलत्रय-पशु-तनधारा॥
धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आव निरोगता।
श्रीजैनवानी तत्त्वज्ञानी, भई विषय-पयोगता॥
अति महा दुरलभ त्याग विषय, कषाय जो तप आदरैं।
नर-भव अनूपम कनक घर पर, मणिमयी कलसा धरैं॥
ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्माङ्गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दान चार परकार, चार संघ को दीजिए।
धन बिजुली उनहार, नर-भव-लाहो लीजिए॥

उत्तम त्याग कह्यो जग सारा, औषध शास्त्र अभय आहारा।

निहचै राग - द्वेष निरवारै, ज्ञाता दोनों दान संभारै ॥
दोनों सँभारे कूप - जलसम, दरब घर में परिनया ।
निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाय खोया बह गया ॥
धनि साध शास्त्र अभय-दिवैया, त्याग राग विरोध को ।
बिन दान श्रावक साध दोनों, लहैं नाहीं बोध को ॥
ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्माङ्गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

परिग्रह चौविस भेद, त्याग करैं मुनिराज जी ।
तिसना भाव उछेद, घटती जान घटाइए ॥

उत्तम आकिंचन गुण जानो, परिग्रह - चिंता दुख ही मानो ।
फाँस तनक सी तन में सालै, चाह लंगोटी की दुख भालै ॥
भालै न समता सुख कभी नर, बिना मुनि - मुद्रा धरैं ।
धनि नगन पर तन-नगन ठाड़े, सुर असुर पायनि परैं ॥
घर माँहि तिसना जो घटावै, रुचि नहीं संसारसौं ।
बहु धन बुरा हू भला कहिये, लीन पर - उपगार सौं ॥
ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

शील - वाढ़ नौ राख, ब्रह्म - भाव अंतर लखो ।
करि दोनों अभिलाख, करहु सफल नर-भव सदा ॥

उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनो, माता बहिन सुता पहिचानो ।
सहैं बान - वरषा बहु सूरे, टिकै न नंन - बान लखि कूरे ॥
कूरे तिया के अशुचि तन में, काम - रोगी रति करैं ।
बहु मृतक सड़हिं मसान माहीं, काग ज्यों चोंचैं भरैं ॥
संसार में विष - वल नारी, तजि गये जोगीश्वरा ।
'द्यानत' धरम दश पैंडि चढ़िकैं, शिव - महल में पग धरा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

समुच्चय-जयमाला

दोहा

दश लच्छन वंदौं सदा, मन-वांछित फलदाय ।
कहों आरती भारती, हम पर होहु सहाय ।।

वेसरी छन्द

उत्तम छिमा जहाँ मन होई, अंतर-बाहिर शत्रु न कोई ।
उत्तम मार्दव विनय प्रकासै, नाना भेद ज्ञान सब भासै ।।
उत्तम आर्जव कपट मिटावै, दुरगति त्यागि सुगति उपजावै ।
उत्तम सत्य-वचन मुख बोलै, सो प्रानी संसार न डोलै ।।
उत्तम शौच लोभ-परिहारी, संतोषी गुण-रतन-भंडारी ।
उत्तम संयम पालै ज्ञाता, नर-भव सफल करै ले साता ।।
उत्तम तप निरवांछित पालै, सो नर करम-शत्रु को टालै ।
उत्तम त्याग करै जो कोई, भोगभूमि - सुर-शिवसुख होई ।।
उत्तम आकिंचन व्रत धारै, परम समाधि दशा विसतारै ।
उत्तम ब्रह्मचर्य मन लावै नर-सुर सहित मुकति-फल पावै ।।

दोहा

करै करम की निरजरा, भव पींजरा विनाश ।
अजर अमर पदकों लहै, 'द्यानत' सुखकी राश ।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपत्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्यदश-लक्षणधर्मेभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वयम्भू-स्तोत्र

[कविवर द्यानतराय]

राजविषै जुगलनि सुख कियो, राज त्याग भुवि शिवपद लियो।
स्वयंबोध स्वयंभू भगवान, बंदौ आदिनाथ गुणखान॥
इंद्र छीर-सागर-जल लाय, मेरु न्हवाये गाय बजाय।
मदन-विनाशक सुख करतार, बंदौं अजित अजित-पदकार॥
शुकल ध्यानकरि करम विनाशि, घाति अघाति सकल दुखराशि।
लह्यो मुकतिपद सुख अधिकार, बंदौं सम्भव भव-दुख टार॥
माता पच्छिम रयन मँझार, सुपने सोलह देखे सार।
भूप पूछि फल सुनि हरषाय, बंदौ अभिनन्दन मन लाय॥
सब कुवादवादी सरदार, जीते स्यादवाद-धुनि धार।
जैन-धरम-परकाशक स्वाम, सुमतिदेव-पद करहुँ प्रनाम॥
गर्भ अगाऊ धनपति आय, करी नगर-शोभा अधिकाय।
बरसे रतन पंचदश मास, नमौं पदमप्रभु सुख की रास॥
इंद फनिंद नरिंद त्रिकाल, वानी सुनि सुनि होहिं खुस्याल।
द्वादश सभा ज्ञान-दातार, नमों सुपारसनाथ निहार॥
सुगुन छियालिस हैं तुम माहिं, दोष अठारह कोऊ नाहिं।
मोह-महातम-नाशक दीप, नमों चन्द्रप्रभ राख समीप॥
द्वादशविध तप करम विनाश, तेरह भेद चरित परकाश।
निज अनिच्छ भवि इच्छकदान, बंदौं पहुपदंत मन आन॥
भवि-सुखदाय सुरगतें आय, दशविध धरम कह्यो जिनराय।
आप समान सबनि सुख देह, बंदौं शीतल धर्म-सनेह॥
समता-सुधा कोप-विष-नाश, द्वादशांग वानी परकाश।

चार संघ - आनंद - दातार, नमौं श्रियांस जिनेश्वर सार ।।
रतनत्रय चिर मुकुट विशाल, सोभै कंठ सुगुन मनि - माल ।
मुक्ति - नार - भरता भगवान, वासुपूज्य बंदौं धर ध्यान ।।
परम समाधि - स्वरूप जिनेश, ज्ञानी ध्यानी हित - उपदेश ।
कर्म नाशि शिव - सुख - विलसंत, बंदौं विमलनाथ भगवंत ।।
अंतर वाहिर परिग्रह डारि, परम दिगंबर - व्रत को धारि ।
सर्व जीव - हित - राह दिखाय, नमों अनंत वचन मन लाय ।।
सात तत्त्व पंचासतिकाय, अरथ नवों छ दरब बहु भाय ।
लोक अलोक सकल परकास, बंदौं धर्मनाथ अविनाश ।।
पंचम चक्रवरति निधि भोग, कामदेव द्वादशम मनोग ।
शांतिकरन सोलह जिनराय, शांतिनाथ बंदौं हरखाय ।।
बहु थुति करे हरष नहिं होय, निंदे दोष गहैं नहिं कोय ।
शीलवान परब्रह्मस्वरूप, बंदौं कुन्थुनाथ शिव - भूप ।।
द्वादश गण पूजें सुखदाय, थुति वंदना करें अधिकाय ।
जाकी निज-थुति कबहुँ न होय, बंदौं अर-जिनवर-पद दोय ।।
पर - भव रतनत्रय - अनुराग, इह भव ब्याह - समय वैराग ।
बाल - ब्रह्म - पूरन - व्रत धार, बंदौं मल्लिनाथ जिनसार ।।
बिन उपदेश स्वयं बैराग, थुति लोकांत करें पग लाग ।
नमः सिद्ध कहि सब व्रत लेहिं, बंदौं मुनिसुव्रत व्रत देहिं ।।
श्रावक विद्यावंत निहार, भगति - भाव सों दियो अहार ।
वरसी रतन - राशि ततकाल, बंदौं नमि प्रभु दीन - दयाल ।।
सब जीवन की बंदी छोर, राग - दोष द्वै बंधन तोर ।
रजमति तजि शिव-तियसों मिले, नेमिनाथ बंदौं सुखनिले ।।

दैत्य कियो उपसर्ग अपार, ध्यान देखि आयो फणधार।
गयो कमठ शठ मुख करि श्याम, नमो मेरुसम पारस स्वाम ॥
भव सागर तैं जीव अपार, धरम पोत में धरे निहार।
डूबत काढ़े दया विचार, वर्धमान बंदौं बहुवार ॥

दोहा

चौवीसों पद-कमलजुग, बंदौं मन-वच-काय।
'द्यानत' पढ़ै सुने सदा, सो प्रभु क्यों न सहाय ॥

निर्वाणक्षेत्र-अर्घ्य

जल गंध अच्छत फूल चरु फल धूप दीपायन धरों।
"द्यानत" करो निरभय जगत तैं जोर कर विनती करों ॥
सम्मेदगिर गिरनार चम्पा पावापुर कैलासकों।
पूजों सदा चौबीस जिन निर्वाणभूमि निवास कों ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थङ्करनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं

महार्घं

गीता छन्द

मैं देव श्री अर्हन्त पूजूं, सिद्ध पूजूं चावसों।
आचार्य श्री उवझाय पूजूं, साधु पूजूं भावसों ॥
अर्हन्त - भाषित वैन पूजूं, द्वादशांग रचे गनी।
पूजूं दिगम्बर गुरुचरन शिव हेत सब आशा हनी ॥
सर्वज्ञभाषित धर्म दशविधि दया - मय पूजूं सदा।
जजि भावना षोडश रतनत्रय जा बिना शिव नहिं कदा ॥
त्रैलोक्य के कृत्रिम अकृत्रिम चैत्य चैत्यालय जजूं।
पन मेरु नन्दीश्वर जिनालय खचर सुर पूजित भजूं ॥

कैलास श्री सम्मेद श्री गिरनार गिरि पूजूं सदा ।
चम्पापुरी पावापुरी पुनि और तीरथ सर्वदा ।।
चौबीस श्री जिनराज पूजूं बीस क्षेत्र विदेह के ।
नामावली इक सहस वसु जप होंय पति शिवगेह के ।।

दोहा

जल गंधाक्षत पुष्प चरु दीप धूप फल लाय ।
सर्व पूज्य पद पूज हूं वहु विध भक्ति वढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं निर्वाणक्षेत्रेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

शान्ति-पाठ

शास्त्रोक्त विधि पूजा महोत्सव सुरपति चक्री करें ।
हम सारिखे लघुपुरुष कैसे यथाविधि पूजा करें ।।
धनक्रिया ज्ञानरहित न जाने रीति पूजन नाथजी ।
हम भक्तिवश तुम चरण आगे जोड़ लीने हाथ जी ।।१।।
दुखहरण मंगलकरण आशा भरन जिन पूजन सही ।
यह चित्तमें सरधान मेरे शक्ति है स्वयमेव ही ।।
तुम सारिखे दातार पाये काज लघु जाचूं कहा ।
मुझ आपसम कर लेहु स्वामी यही इक वांछा महा ।।२।।
संसार भीषण विपमवन में कर्म मिल आतापियो ।
तिसदाहतें आकुलित चिरतैं शांति थल कहूं ना लियो ।।
तुम मिले शांतस्वरूप शांति करण समरथ जगपती ।
वसुकर्म मेरे शांत कर दो शांति में पंचमगती ।।३।।
जबलों नहीं शिव लह्यों तवलों देहु यह धन पावना ।
सत्संग शुद्धाचरण श्रुत अभ्यास आतम भावना ।।
तुमविन अनंतानंत काल गयो रुलत जगजाल में ।

अब शरण आयो दोऊ कर जोर नावत भाल मैं ॥४॥
कर प्रमाण के मानतें, गगन नपों किस भंत।
त्यों तुम गुणवरनन करें, कहूँ न पावे अंत॥

विसर्जन

संपूर्णविधि करि वीनऊँ इस परम पूजन ठाठ में।
अज्ञानवश शास्त्रोक्त विधितें चूक कीनी पाठ में॥
सो होउ पूर्ण समस्त विधिवत् तुम चरण की शरणतें।
वंदूं तुम्हें कर जोड़ के उद्धार जम्मन मरणतें॥१॥
आह्वानन स्थापन सन्निधीकरण विधानजी।
पूजन विसर्जन हू यथा विधि जानों नहीं गुण खानजी॥
जो दोष लागे सो नशो सब तुम चरण की शरण तें।
वंदूं तुम्हें कर जोड़ के उद्धार जम्मन मरणतें॥२॥
तुम रहित आवागमन आह्वानन कियो निज भाव में।
यथा विधि निज शक्ति सम पूजन कियो अति चाव तें॥
करहूं विसर्जन भाव ही में तुम चरण की शरण तें।
वंदूं तुम्हें कर जोड़ के उद्धार जम्मन मरण तें॥३॥
तीन भुवन तिहुँ काल में तुमसा देव न और।
सुख कारन संकट हरण नमूं जुगल कर जोर॥

शान्ति-पाठ (संस्कृत)

शान्तिजिनं शशि-निर्मल-वक्त्रं शील-गुण-व्रत-संयम-पात्रम्।
अष्टशतार्चित-लक्षण-गात्रं नौमि जिनोत्तमम्बुज-नेत्रम्॥१॥
पञ्चममीप्सित-चक्रधराणां पूजितमिन्द्र-नरेन्द्र-गणैश्च।

शान्तिकरं गण-शान्तिमभीप्सुः षोडस-तीर्थंकरं प्रणमामि ॥२॥
दिव्य-तरुः सुर-पुष्प-सुवृष्टिर्दुन्दुभिरासन-योजन घोषौ ।
आतपवारण-चामर-युग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥३॥
तं जगदर्चित-शान्ति-जिनेन्द्र शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं मह्यमरं पठते परमां च ॥४॥

येऽभ्यर्चिता मुकुट-कुण्डल-हार-रत्नैः ।
शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुत-पाद-पद्माः ।
ते मे जिनाः प्रवर-वंश-जगत्प्रदीपा-
स्तीर्थङ्कराः सतत-शान्तिकरा भवन्तु ॥५॥

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शान्ति भगवाञ्जिनेन्द्रः ॥६॥
क्षेमं सर्व-प्रजानां प्रभवतु बलवान्धार्मिको भूमिपालः ।
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ।
दुर्भिक्षं चौर-मारी क्षणमपि जगतां मास्म भूज्जीवलोके ।
जैनेन्द्र धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्व-सौख्य-प्रदायि ॥७॥
प्रध्वस्त - घाति - कर्माणः केवलज्ञान - भास्कराः ।
कुर्वन्तु जगतां शान्ति वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥८॥

इष्ट-प्रार्थना

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः

शास्त्राभ्यासो जिनपति-नुतिः सङ्गतिः सर्वदार्यैः
सद्वृत्तानां गुण-गण-कथा दोष-वादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रिय - हित-वचो भावना चात्मतत्त्वे ।
सम्पद्यन्तां मम भव-भवे यावदेतेऽपवर्गः ॥९

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पद-द्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाण-सम्प्राप्तिः ॥१०
अक्खर-पयत्थ-हीणं मत्ता-हीणं च जं मए भणियं ।
तं खमउ णाणदेव य मज्झ वि दुक्ख-क्खयं दिंतु ॥११
दुक्ख-खओ कम्म-खओ समाहिमरणं च बोहि-लाहो य।
मम होउ जगद्-बंधव तव जिणवर चरण-सरणेण ॥१२

विसर्जनम्

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया ।
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥१॥
आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनम् ।
विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वरः ॥२॥
मन्त्र-हीनं क्रिया-हीनं द्रव्य-हीनं तथैव च ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वरः ॥३॥
आहूता ये पुरा देवाः लब्धभागाः यथाक्रमम्।
ते मयाऽभ्यर्चिताभक्त्या सर्वे यान्तु यथास्थिति ॥४॥

पंच परमेष्ठी की आरती

इहविधि मंगल आरती कीजै ।
पंच परमपद भज सुख लीजै ॥टेक॥
पहली आरती श्रीजिनराजा ।
भव दधि पार उतार जिहाजा ॥इहविधि०॥१॥
दूसरी आरती सिद्धनकेरी ।
सुमिरन करत मिटै भव फेरी ॥इहविधि०॥२॥
तीजी आरती सूर मुनिंदा।

जनम मरण दुख दूर करिंदा ॥इह्विधि०॥३॥
चौथी आरती श्री उवझाया।
दर्शन देखत पाप पलाया ॥इह्विधि०॥४॥
पांचमी आरती साधु तिहारी।
कुमति-विनाशन शिव-अधिकारी ॥इह्विधि०॥५॥
छट्ठी ग्यारह प्रतिमा धारी।
श्रावक वंदों आनन्दकारी ॥इह्विधि०॥६॥
सातमि आरती श्रीजिनवानी।
'द्यानत' सुरग मुकति सुखदानी ॥इह्विधि०॥७॥

भागचन्द्र कृत (भजन)

राग सोरठा

हे जिन तुम गुन अपरं पार, चन्द्रोज्ज्वल अविकार ॥टेक॥
जबै तुम गर्भमाहि् आये, तबै सब सुरगन मिलि आये।
रतन नगरी में बरषाये, अमित अमोघ सुढार ॥हे जिन०॥१
जन्म प्रभु तुमने जब लीना, न्हवन सुरगिर परि कीना।
भक्ति करि सची सहित भीना, बोलो जयजयकार ॥हे जिन०॥२
जगत छनभंगुर जब जाना, भये तब नगनवृत्तो बाना।
स्तवन लोकांतिकसुर ठाना, त्याग राजको भार ॥हे जिन०॥३
घातिया प्रकृति जबै नासी, चराचर वस्तु सबै भासी।
धर्म की वृष्टि करी खासी, केवलज्ञान भंडार ॥हे जिन०॥४
अघाती प्रकृति सुविघटाई, मुक्तिकान्ता तब ही पाई।
निराकुल आनंद असहाई, तीनलोकसरदार ॥ हे जिन० ॥५
पार गनधर हूं नहिं पावै, कहां लगि 'भागचन्द' गावै।
तुम्हारे चरनांबुज ध्यावै, भवसागर सों तार ॥हे जिन०॥६